स्वाध्याय पद संग्रह

★ प्रकाशक ★

श्री शान्तिलाल वनमालीदास शेठ
फाउन्डेशन, जयनगर, बेंगलोर
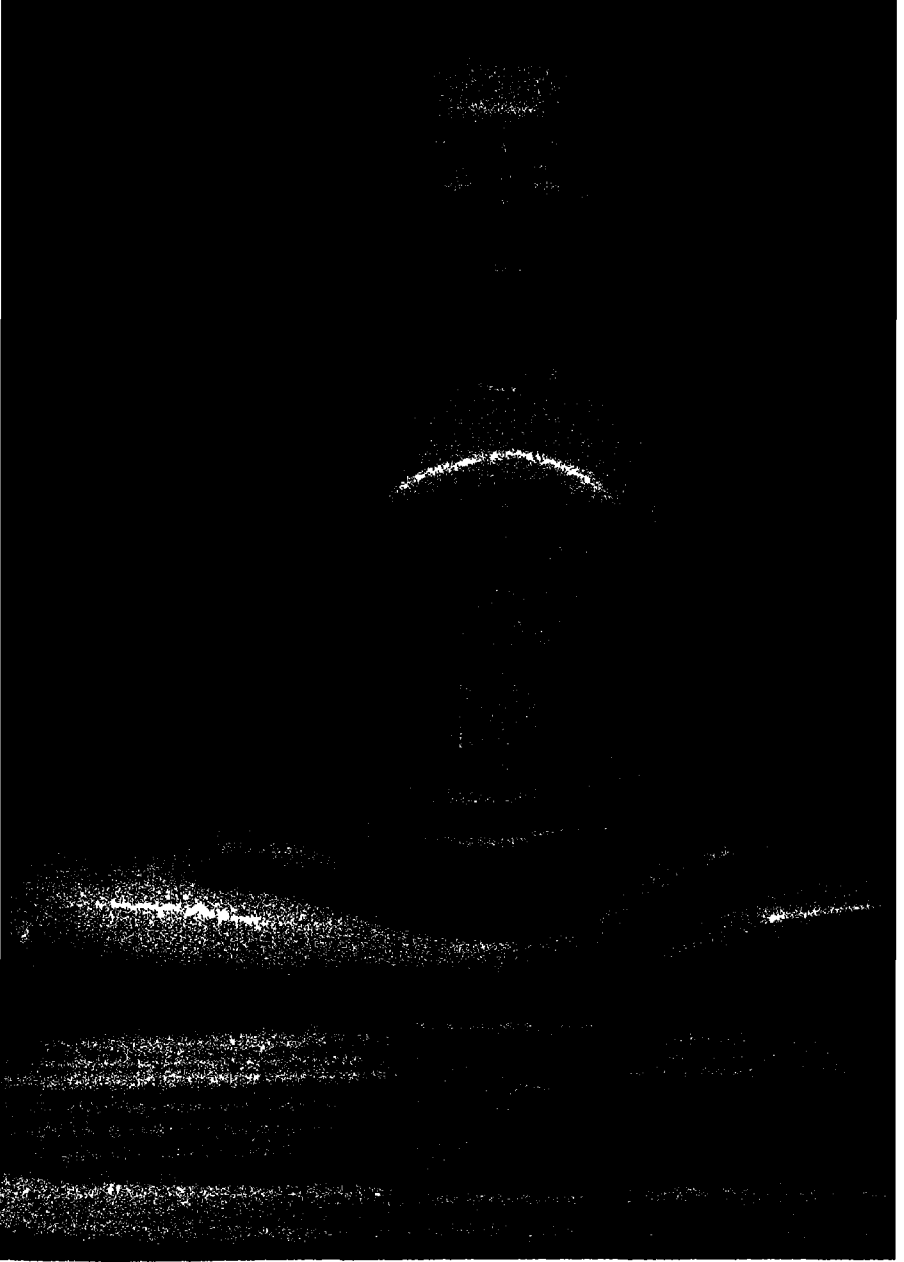
श्री आदिनाथ भगवान
(बेंगलोर जिन मंदिर)
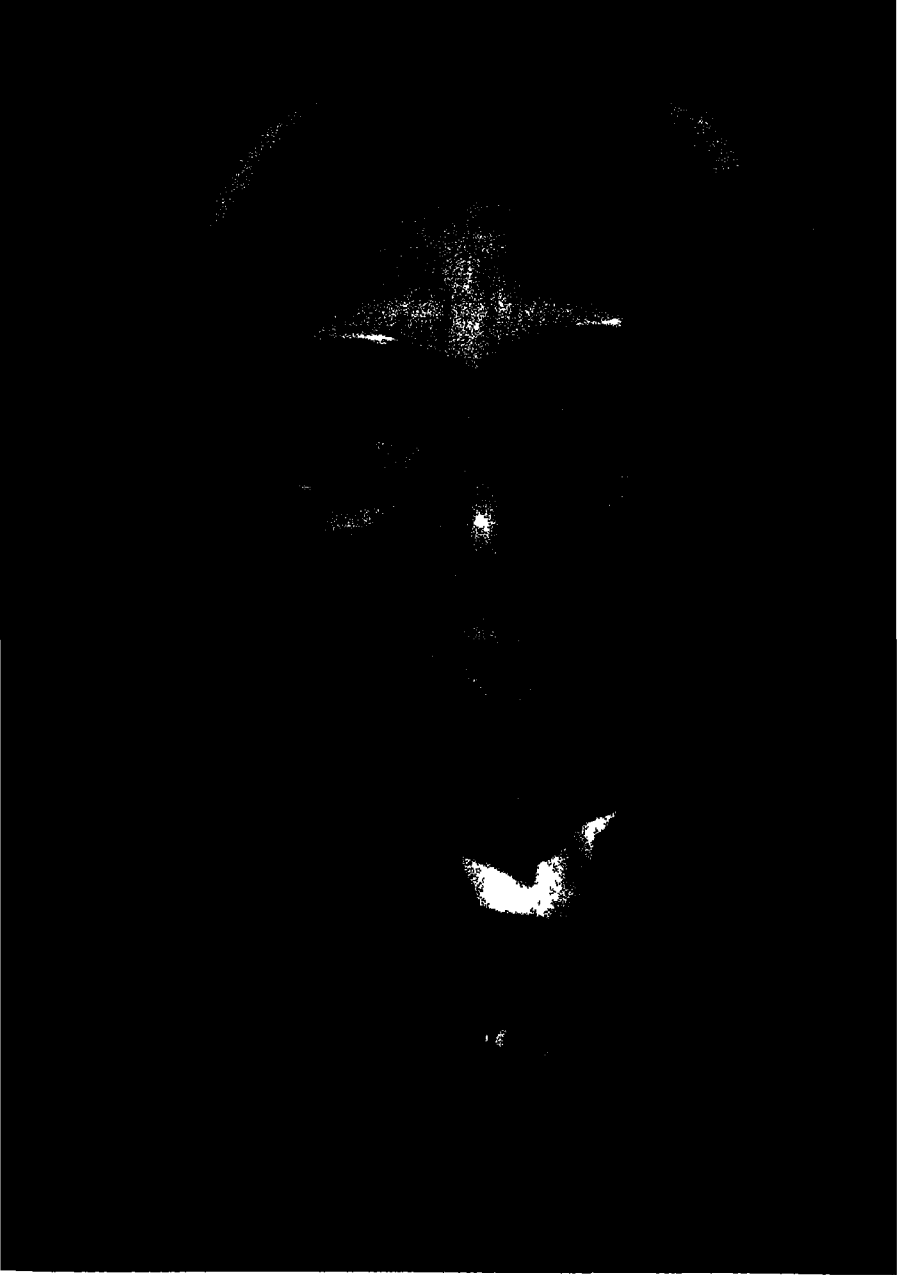
परम श्रद्धेय आदरणीय

पूज्य श्री शान्तिलालजी वनमालीदास शेठ

जन्म 21-05-1911 (जेतपुर-गुजरात)
देहविलय 11-07-2000 (बेंगलोर)

प्रकाशकीय

यह पुस्तक 'स्वाध्याय-पद-संग्रह' - हम हमारे परम श्रद्धेय पूज्य श्री शान्तिलालजी वनमालीदास शेठ - की पावन स्मृति मे मुमुक्षु समाज के स्वाध्याय, चितन व मनन अर्थ सादर समर्पित भेट करते हैं।

इस पुस्तक मे उन सभी खास रचनाओं का संकलन किया गया है जो पूज्य श्री व परिवारजनो को विशेष प्रिय है व नित्य नियम स्वाध्याय मे इनका पाठ अनवरत करते है।

इस पुस्तक के संकलन मे जिन सत्साहित्य मे से प्रेरणा ली है - हम उन सभी रचनाकारो, प्रकाशको, सकलनकर्ताओं, मुद्रक व अन्य समस्त सहयोगियो का - जिनका हमे प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से सहकार प्राप्त हुआ है - हम हृदय से आभारी है।

हम सब व मुमुक्षु समाज इसका स्वाध्याय, चितन व मनन कर लाभान्वित हो - इस पवित्र भावना के साथ -

सादर समर्पित -

श्रीमती दयाबहन शान्तिलाल शेठ परिवार

बेगलोर

21-5-2001

विषय - सूची

आलोचना-पाठ खण्ड

भक्ति-पाठ खण्ड (हिन्दी)

भक्ति-पाठ खण्ड (गुजराती)

स्वाध्याय-पाठ खण्ड

सुभासियं

णमो अरिहताण, णमो सिद्धाण, णमो आयरियाण,
णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्व साहूण। (1)

उसभमजिय च वदे, सभवमभिणदण च सुमइ च,
पउमप्पहं सुपास, जिण च चदप्पह वदे। (2)

सुविहि च पुप्फदत, सीयलसिज्जस - वासुपुज्ज च,
विमलमणत च जिण, धम्म सति च वदामि। (3)

कुथु अर च मल्लि, वदे मुनिसुव्वय नमि जिण च,
वदामि रिठ्ठनेमि, पास तह वद्धमाण च। (4)

चदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहिय पयासयरा,
सागरवर गभीरा, सिद्धा सिद्धि मम दिसंतु। (5)

चत्तारि मगल - अरिहता मगल, सिद्धा मंगलं,
साहू मगल, केवलिपण्णतो धम्मो मगल। (6)

चत्तारि लोगुत्तमा - अरिहता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णतो धम्मो लोगुत्तमो। (7)

चत्तारि सरण पवज्जामि - अरिहते सरण पवज्जामि,
सिद्धे सरण पवज्जामि, साहू सरण पवज्जामि,
केवलिपण्णत्त धम्म सरण पवज्जामि। (8)

जयइ जगजीवजोणी - वियाणओ जगगुरु जगाणदो,
जगणाहो जग बधू, जयइ जगप्पियामहो भयवं। (9)

दाणाण - सेट्ठ अभयप्पयाण, सच्चेसु वा अणवज्ज वयंति,
तवेसु वा उत्तम - बभचेर, लोगुत्तमे समणे नायपुत्ते। (10)

जीवाऽजीवा य बन्धो य, पुण्ण पावाऽऽसवो तहा,
सवरा, निज्जरा, मोक्खो, सतेए तहिया नव। (11)

धम्मो मगलमुक्किट्ठ, अहिसा सजमो तवो,
देवा वि त नमसंति, जस्स धम्मे सयामणो। (12)

धम्मो वत्थुसहावो, खमादिभावो य दसविहो धम्मो,
रयणत्तय च धम्मो, जीवाणं रक्खणं धम्मो। (13)

सव्वे जीवा वि इच्छंति, जिविउं न मरिज्जिउं,
तम्हा पाणवह घोरं, निग्गधा वज्जय तिणं। (14)

रागो य दोसो वि य कम्मबीय, कम्म च मोहप्पभवं वयति,
कम्म च जाईमरणस्स मूल, दुक्ख च जाइमरण वयंति। (15)

एय खु णाणिणो सार, ज न हिसइ किचण,
अहिमासमय चेव, एतावंते वियाणिया । (16)

चित्तमत्तमचित वा, परिगिज्झ किसामवि,
अन्न वा अणुजाणाइ, एव दुक्खा ण मुच्चइ। (17)

अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली,
अप्पा काम दुहा धेणू, अप्पा मे नंदणंवणं। (18)

खणमित्त सुक्खा, बहुकालदुक्खा, पगामदुक्खा अणिगामसुक्खा,
संसार मोक्खस्स विपक्खभूया, खाणी अणत्थाण उ कामभोगा। (19)

जयं चरे, जयं चिट्ठे, जयमासे जयं सए,
जयं भुंजतो भासंतो, पावकम्म न बधइ। (20)

जिणवयणे अणुरत्ता, जिणवयणं जे करेंति भावेण,
अमला असकलिट्ठा, ते होंति परित्त ससारी। (21)

अरहंत भासियत्थं, गणहरदेवेहि गथियं सम्म,
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोदहि सिरसा। (22)

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे,
मिती मे सव्व भूएसु, वेरं मज्झ ण केण वि। (23)

णाण सरण मे, दंसणं च सरण च, चरिय सरणं च,
तव सजमं च सरणं, भगव सरणो महावीरो। (24)

सुभासियं पदों के अर्थ

अर्हतो को नमस्कार, सिद्धो को नमस्कार, आचार्यो को नमस्कार, उपाध्यायो को नमस्कार, लोकवर्ती सर्वसाधुओ को नमस्कार। (1)

मै 1 ऋषभ, 2 अजित, 3 सम्भव, 4 अभिनन्दन, 5 सुमति, 6 पद्मप्रभ , 7 सुपार्श्व तथा 8 चन्द्रप्रभ को वन्दन करता हूँ। (2)

मै 9 सुविधि (पुष्पदत), 10 शीतल, 11 श्रेयास, 12 वासुपूज्य, 13 विमल, 14 अनत, 15 धर्म, 16 शान्ति को वदन करता हूँ। (3)

मै 17 कुन्थु, 18 अर, 19 मल्लि, 20 मुनिसुव्रत, 21 नमि, 22 अरिष्टनेमि, 23 पार्श्व तथा 24 वर्धमान को वन्दन करता हूँ। (4)

चद्र मे अधिक निर्मल, सूर्य मे अधिक प्रकाश करनेवाले, सागर की भाति गम्भीर सिद्ध भगवान मुझे सिद्धि (मुक्ति) प्रदान करे। (5)

अर्हत मगल है,सिद्ध मगल है,साधु मगल है, केवलिप्रणीत धर्म मगल है। (6)

अर्हत लोकोत्तम है, सिद्ध लोकोत्तम है, साधु लोकोत्तम है, केवलि प्रणीत धर्म लोकोत्तम है। (7)

अर्हनो की शरण लेता हूँ, सिद्धो की शरण लेता हूँ, साधुओं की शरण लेता हूँ, केवलि - प्रणीत धर्म की शरण लेता हूँ। (8)

जीवो की उत्पत्ति के स्थान को जानने वाले जगत्गुरु, जगत को आनद देने वाले चराचर जगत के नाथ, विश्व बधु, जगत के पितामह, भगवान तीर्थंकर देवाधिदेव जयवंत है। (9)

जैसे दानो मे अभयदान श्रेष्ठ है, सत्यवचनो मे अनवध वचन (पर-पीडाजनक नही) श्रेष्ठ है। जैसे सभी सत्यतपो मे ब्रह्मचर्य उत्तम है, वैसे ही ज्ञातपुत्र श्रमण भगवान महावीर लोक मे उत्तम थे। (10)

जीव, अजीव, बंध, पुण्य, पाप, आश्रव, संवर, निर्जरा और मोक्ष, ये नव यथातथ्य (तत्व) है। (11)

धर्म उत्कृष्ट मगल है। अहिसा, सयम और तप उसके लक्षण है। जिसका मन सदा धर्म मे रमा रहता है, उसे देव भी नमस्कार करते है। (12)

वस्तु का स्वभाव धर्म है। क्षमा आदि भावो की अपेक्षा से वह दस प्रकार का है। रत्नत्रय (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र) तथा जीवो की रक्षा करना धर्म है। (13)

सभी जीव जीना चाहते है, मरना नही। इसलिए प्राणवध को भयानक जानकर उसका वर्जन करना चाहिए। (14)

राग और द्वेष कर्म के बीज (मूल कारण) है। कर्म मोह से उत्पन्न होता है। वह जन्म मरण का मूल है। जन्म मरण को दु ख का मूल कहा गया है। (15)

ज्ञानी होने का सार यही है कि वह किसी भी प्राणी की हिसा न करे। इतना जानना ही पर्याप्त है कि अहिसामूलक समता ही धर्म है। अथवा यही अहिसा का विज्ञान है। (16)

सजीव या निर्जीव, स्वल्प वस्तु का भी जो परिग्रह (आसक्ति) रखता है अथवा दूसरे को उसकी अनुज्ञा देता है, वह दु ख से मुक्त नही होता। (17)

मेरी आत्मा ही वैतरणी नदी है। मेरी आत्मा ही कूटशाल्मली वृक्ष है। मेरी आत्मा ही कामदुहा धेनु है और मेरी आत्मा ही नन्दन वन है। (18)

काम भोग क्षणभर सुख और चिरकाल तक दु ख देने वाले है। बहुत दु ख और थोडा सुख देने वाले है। ससार-मुक्ति के विरोधी और अनर्थो की खान है। (19)

यत्ना (विवेक या उपयोग) पूर्वक चलने, यत्नाचार पूर्वक रहने, यत्नाचार पूर्वक सोने, यत्नाचार पूर्वक खाने और यत्नाचार पूर्वक बोलने से पाप कर्म का बध नही होता। (20)

जो जिनवचन मे अनुरक्त है तथा जिनवचनो का भानपूर्वक आचरण करते है, वे निर्मल और असक्लिष्ट होकर परीत ससारी (अल्प जन्म-मरण वाले) हो जाते है। (21)

जो अर्हत के द्वारा अर्थरूप मे उपदिष्ट है तथा गणधरो के द्वारा सूत्ररूप मे सम्यक्गुफित है, उस श्रुतज्ञानरूपी महासिन्धु को मै भक्तिपूर्वक सिर नवाकर प्रणाम करता हूँ। (22)

मै सब जीवो को क्षमा करता हूँ। सब जीव मुझे क्षमा करे। मेरा सब प्राणियो के प्रति मैत्रीभाव है। मेरा किसी से भी वैर नही है। (23)

ज्ञान मेरा शरण है, दर्शन मेरा शरण है, चारित्र मेरा शरण है, तप और सयम मेरा शरण है तथा भगवान् महावीर मेरे शरण है। (24)

सुभाषितम्

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, नमोऽस्तु।

ओंकार बिन्दु, सयुक्त, नित्य ध्यायन्ति योगिन,
कामद, मोक्षद चेव, ॐकाराय नमो नम। (1)

अर्हतो भगवंत इन्द्रमहिता, सिद्धाश्च सिद्धिस्थिता·,
आचार्या जिनशासनोन्नत्तिकरा पूज्या उपाध्यायका। (2)

श्री सिद्धात सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधका,
पचैते परमेष्ठिन· प्रतिदिनं, कुर्वतु नो मंगलम्। (3)

वीर सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो, वीर बुधा मश्रिता,
वीरेणाभिहत स्वकर्मनिचयो, वीराय नित्य नमो। (4)

मगल भगवान वीरो, मगल गौतमोगणी,
मंगल कुन्दकुन्दार्यो, जैन धर्मोस्तु मगलम्। (5)

सर्व मगल मागल्यं, सर्व कल्याण कारनम्,
प्रधान सर्व धर्माणा, जैन जयतु शासनम्। (6)

ब्राह्मी चदन बालिका भगवती, राजीमती द्रौपदी,
कौशल्या च मृगावती च सुलसा, सीता सुभद्राशिवा। (7)

कुन्ती शीलवती नलस्य दहिता, चूला प्रभावत्यपि,
पद्मावत्यापि सुदरी दिनमुखे, कुर्वतु वो मगलम्। (8)

अज्ञान तिमिरान्धान, ज्ञानाजन शलाकया,
चक्षुरुन्मीलित येन, तस्मै श्री गुरुवे नम·। (9)

आत्मा ज्ञानं, स्वयं ज्ञानं, ज्ञानादत्यत्करोति किम्,
परभावस्य कर्त्तात्मा, मोहोदयं व्यवहारिणाम्। (10)

सत्त्वेषुमैत्री गुणिषु प्रमोद, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वं,
माध्यस्थभावं, विपरीतवृतौ, सदा ममात्मा विदधातु देव!। (11)

नमस्कार समो मंत्रः, शत्रुंजय समोगिरि,
वीतराग समो देवो, न भूतो न भविष्यति। (12)

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने,
सदा मेऽस्तु सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु भवे भवे। (13)

नहित्राता नहित्राता, नहित्राता जगत्त्रये,
वीतरागत्परो देवो, न भूतो न भविष्यति। (14)

स्वदोष शान्तया विहतात्म शान्ति,
शान्तिर् विधाता शरणां गतामा,
भूयात् भव क्लेश स्वदोष शान्तये,
शान्तिर् जिनो मे भगवान शरणयं। (15)

भक्तामर स्तोत्रम्

भक्तामर - प्रणत - मौलि - मणि - प्रभाणा,
मुद्योतकं दलित - पाप - तमो - वितानम्,
सम्यक्प्रणम्य जिन - पाद - युगं युगादा-,
वालम्बनं भव - जले पततां जनानाम्। (1)

य· संस्तुत· सकल - वागमय - तत्त्व बोधा-,
दुद्भूत - बुद्धि - पटुभि. सुर - लोक नाथैः,
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय - चित्त - हरैरुदारै·,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथम जिनेन्द्रम्। (2)

बुद्धया विनापि विबुधार्चित - पाद - पीठ,
स्तोतुं समुद्यत - मतिर्विगत - त्रपोऽहम्,
बालं विहाय जल - संस्थितमिन्दु बिम्ब,
मन्य: क इच्छति जन. सहसा ग्रहीतुम्। (3)

वक्तु गुणान्गुण - समुद्र शशांक - कांतान्,
कस्ते क्षमः सुर-गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्धया,
कल्पान्त - काल- पवनोद्धत - नक्र- चक्रं,
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम्। (4)

सोऽह तथापि तव भक्ति - वशान्मुनिश,
कर्तु स्तवं विगत - शक्तिरपि प्रवृत्त.,
प्रीत्यात्म - वीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं,
नाभ्येति किं निज - शिशो परिपालनार्थम्। (5)

अल्पश्रुत श्रुतवता परिहास - धाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम्,
यत्कोकिल किल मधौ मधुर विरौति,
तच्चाम्र - चारु - कलिका - निकरैकहेतु । (6)

त्वत्सस्तवेन भव - सन्तति - सन्निबद्धं,
पाप क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम्,
आक्रान्त - लोकमलि - नीलमशेषमाशु,
सूर्याशु - भिन्नमिव शार्वरमन्धकारम्। (7)

मत्वेति नाथ तव सस्तवन मयेद-,
मारभ्यते तनु - धियापि तव प्रभावात्,
चेतो हरिष्यति सता नलिनी - दलेषु,
मुक्ताफल - द्युतिमुपैति ननूद - बिन्दु । (8)

आस्ता नव स्तवनमस्त - समस्त - दोष,
त्वत्सकथापि जगता दुरितानि हन्ति,
दूरे सहस्रकिरण कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि। (9)

नात्यद्भुत भुवन - भूषण भूत - नाथ,
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्त ,
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रित य इह नात्मसमं करोति । (10)

दृष्ट्वा भवन्तमनिमेष - विलोकनीयं,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षु.,
पीत्वा पय शशिकर - द्युति - दुग्ध सिन्धो ,
क्षार जल जल - निधेरसितु क इच्छेत्। (11)

यै शान्त - राग - रुचिभि. परमाणुभिस्त्व,
निर्मापितस्त्रिभुवनैक - ललाम - भूत,
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समानमपर न हि रुपमस्ति । (12)

वक्त्रं क्व ते सुर - नरोरग - नेत्र - हारि,
नि शेष - निर्जित - जगत्त्रितयोपमानम्,
बिम्बं कलक - मलिन क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डु पलाश - कल्पम्। (13)

सपूर्ण- मण्डल - शशांक - कला - कलाप-,
शुभ्रा गुणस्त्रिभुवन तव लंघयन्ति,
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर नाथमेकं,
कस्तान्नि वारयति सचरतो यथेष्टम्। (14)

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि-,
र्नीत मनागपि मनो न विकार - मार्गम्,
कल्पान्त - काल - मरुता - चलिताचलेन,
कि मन्दराद्रि - शिखरं चलितं कदाचित्। (15)

निर्धूम - वर्तिरपवर्जित - तैल - पूर,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि,
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः । (16)

नास्त कदाचिदुपयासि न राहु - गम्य·,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति,
नाम्भोधरोदर - निरुद्ध - महा - प्रभाव,
सूर्यातिशायि - महिमासि मुनीन्द्र ! लोके। (17)

नित्योदयं दलित - मोह - महान्धकारं,
गम्यं न राहु - वदनस्य न वारिदानाम्,
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति,
विद्योतयज्जगदपूर्व - शशाङ्क - बिम्बम्। (18)

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा,
युष्मन्मुखेन्दु - दलितेषु तमस्सु नाथ,
निष्पन्न - शालि - वन - शालिनि जीव - लोके,
कार्यं कियज्जलधरैर्जल - भार - नम्रै। (19)

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं,
नैव तथा हरि - हरादिषु नायकेषु,
तेज स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं,
नैव तु काच - शकले किरणाकुलेऽपि। (20)

मन्ये वरं हरि - हरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति,
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्य,
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्त रेऽपि। (21)

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुत त्वदुपम जननी प्रसूता,
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्त्र - रश्मि,
प्राच्यैव दिग्जनयति स्फुरदशुजालम्। (22)

त्वामामनन्ति मुनय परमं पुमांस,
मादित्य - वर्णममलं तमस. परस्तात्,
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नान्य शिव शिव - पदस्य मुनीन्द्र पन्थाः ! (23)

त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्य,
ब्रह्माणमीश्वर मनन्तमनंग केतुम्,
योगीश्वरं विदित - योगमनेकमेक,
ज्ञान - स्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः। (24)

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित - बुद्धि - बोधात्,
त्व शंकरोऽसि भुवन - त्रय - शंकरत्वात्,
धातासि धीर शिव - मार्ग - विधेर्विधानाद्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि। (25)

तुभ्यं नमस्त्रिनभुवनार्तिहराय नाथ !
तुभ्यं नम क्षिति - तलामल - भूषणाय,
तुभ्यं नमस्त्रिजगत॰ परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन ! भवोदधि - शोषणाय। (26)

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै-,
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश,
दोषै रुपात्तविविधाश्रय - जात - गर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिद पीक्षितोऽसि। (27)

उच्चैरशोक - तरु - संश्रितमुन्मयूख-,
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम्,
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त - तमो - वितानं,
बिम्बं रवेरिव पयोधर - पार्श्ववर्ति। (28)

सिहासने मणि - मयूख - शिखा - विचित्रे,
विभ्राजते तव वपु॰ कनकावदातम्,
बिम्बं वियद्विलसदंशुलता - वितानं,
तुंगोदयाद्रि शिरसीव सहस्त्र - रश्मेः। (29)

कुन्दावदात - चल - चामर - चारु - शोभ,
विभ्राजते तव वपु कलधौत - कान्तम्,
उद्यच्छशाक - शुचिनिर्झर - वारि - धार,
मुच्चैस्तट सुरगिरेरिव शातकौम्भम्। (30)

छत्र-त्रय तव विभाति शशाक- कान्तम्,
मुच्चे स्थित स्थगित - भानु - कर - प्रतापम्,
मुक्ता - फल - प्रकर - जाल - विवृद्ध - शोभ,
प्रख्यापयत्त्रिजगत परमेश्वरत्वम्। (31)

गम्भीर - तार - रव - पूरित - दिग्विभाग-,
स्त्रैलोक्य - लोक - शुभ - संगम - भूति - दक्ष',
सद्धर्मराज - जय - घोषण - घोषक'सन्,
खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशस प्रवादी। (32)

मन्दार - सुन्दर - नमेरु - सुपारिजात-,
सन्तानकादि - कुसुमोत्कर - वृष्टि - रुद्धा,
गन्धोद - बिन्दु - शुभ - मन्द - मरुत्प्रपाता,
दिव्या दिव पतति ते वचसां ततिर्वा। (33)

शुम्भत्प्रभा - वलय - भूरि - विभा विभोस्ते,
लोक - त्रय द्युतिमता द्युतिमाक्षिपन्ती,
प्रोद्यद्दिवाकर - निरन्तर - भूरि - सख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम - सौम्याम्। (34)

स्वर्गापवर्ग - गम - मार्ग - विमार्गणेष्टः,
सद्धर्म - तत्व - कथनैक - पटुस्त्रिलोक्या',
दिव्य - ध्वनिर्भवति ते विशदार्थ - सर्व-,
भाषा - स्वभाव - परिणाम - गुणै - र्प्रयोज्य। (35)

उन्निद्र - हेम - नव - पकज - पुञ्ज - कान्ती ,
पर्युल्लसन्नख - मयूख - शिखाभिरामौ,
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्त ,
पद्मानि तत्र विबुधा परिकल्पयन्ति। (36)

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र,
धर्मोपदेशन - विधौ न तथा परस्य,
यादृक्प्रभा दिनकृत प्रहतान्धकारा,
तादृक्कुतो ग्रह - गणस्य विकासिनोऽपि। (37)

श्च्योतन्मदाविल - विलोल - कपोल - मूल-,
मत्तभ्रमद् भ्रमर - नाद - विवृद्ध - कोपम्,
ऐरावताभ मिभमुद्धत मापतन्तं,
दृष्टवा भय भवति नो भवदाश्रितानाम्। (38)

भिन्नेभ - कुम्भ गलदुज्जवल - शोणिताक्त-,
मुक्ता - फल - प्रकर - भूषित - भूमि - भाग ,
बद्ध - क्रम क्रम - गत हरिणाधिपोऽपि,
नाक्रामति क्रम - युगाचल - संश्रितं ते। (39)

कल्पान्त - काल - पवनोद्धत -वह्नि - कल्प,
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिंगम्,
विश्व जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं,
त्वन्नाम - कीर्तन - जल शमयत्यशेषम्। (40)

रक्तेक्षणं समद - कोकिल - कण्ठ - नीलं,
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम्,
आक्रामति क्रम - युगेण निरस्त - शंड्क ,
स्त्वन्नाम - नाग - दमनी हृदि यस्य पुस । (41)

वल्गतुरग - गज - गर्जित - भीमनाद,
माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम्,
उद्यद्दिवाकर - मयूख - शिखापविद्धं,
त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति। (42)

कुन्ताग्र - भिन्न - गज - शोणित - वारिवाह,
वेगावतार - तरणातुर - योध - भीमे,
युद्धे जयं विजित - दुर्जय - जेय - पक्षा,
स्त्वत्पाद - पंकज - वनाश्रयिणो लभन्ते। (43)

अम्भोनिधौ क्षुभित - भीषण - नक्र -चक्र,
पाठीन - पीठ - भय - दोल्वण - वाडवाग्नौ,
रगत्तरंग - शिखर - स्थित - यान - पात्रा-,
स्त्रास विहाय भवत स्मरणाद् व्रजन्ति। (44)

उद्भूत - भीषण - जलोदर - भार-भुग्ना,
शोच्यां दशामुपगताश्च्युत - जीविताशा·,
त्वत्पाद - पकज - रजोमृत - दिग्ध - देहा,
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज - तुल्यरूपा। (45)

आपाद - कण्ठमुरुश्रृखल - वेष्टिताङ्गा,
गाढं बृहन्निगड - कोटि - निघृष्ट - जंघा,
त्वन्नाम - मन्त्रमनिश मनुजा· स्मरन्त·,
सद्य· स्वयं विगत - बन्ध - भया भवन्ति। (46)

मत्तद्विपेन्द्र - मृगराज - दवानलाहि,
संग्राम - वारिधि - महोदर - बन्धनोत्थम्,
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव,
यस्तावक स्तवमिमं मतिमानधीते। (47)

स्तोत्रस्त्रज तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धा,
भक्त्या मया रूचिर - वर्ण - विचित्र पुष्पाम्,
धत्ते जनो य इह कण्ठ - गतामजस्त्र,
तं ' मानतुंग ' मवशा समुपैति लक्ष्मी । (48)

दुखमयी पर्याय क्षणभगुर सदा कैसे रहे?
अमर है ध्रुव आतमा वह मृत्यु को कैसे वरे?
ध्रुवधाम से जो विमुख वह पर्याय ही ससार है,
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है।

संयोग क्षणभगुर सभी पर आतमा ध्रुवधाम है,
पर्याय लयधर्मा परन्तु द्रव्य शाश्वत धाम है,
इस सत्य को पहिचानना ही भावना का सार है,
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है।

दर्शन-स्तुति

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानद रसलीन,
सो जिनेद्र जयवत नित, अरि - रज - रहस विहीन। (1)

जय वीतराग - विज्ञानपूर, जय मोहतिमिर को हरन सूर,
जय ज्ञान अनतानत धार, दृगसुखवीरजमण्डित अपार। (2)

जय परमशात मुद्रा समेत, भविजन को निज अनुभूति हेत,
भवि भागन वचजोगेवशाय, तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम नशाय। (3)

तुम गुण चितत निजपर विवेक, प्रगटै विघटै आपद अनेक,
तुम जगभूषण दूषणविमुक्त, सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त। (4)

अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप, परमात्म परम पावन अनूप,
शुभ अशुभ विभावअभाव कीन, स्वभाविकपरिणतिमय अछीन। (5)

अष्टादश दोष विमुक्त धीर, स्वचतुष्टयमयराजत गभीर,
मुनिगणधरादि सेवत महंत, नव केवललब्धिरमा धरत। (6)

तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहि जैहै सदीव,
भवसागर मे दुख छार वारि, तारन को और न आप टारि। (7)

यह लखिनिजदुखगद हरणकाज, तुमही निमित्तकारण इलाज,
जाने तातै मै शरण आय, उचरो निज दुख जो चिर लहाय। (8)

मै भ्रम्यो अपनपो विसरि आप, अपनाये विधि फल पुण्य पाप,
निजको परको करता पिछान, पर मे अनिष्टता इष्ट ठान। (9)

आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यो मृग मृगतष्णा जानि वारि,
तन परिणति मे आपो चितार, कबहूँ न अनुभव्यो स्वपदसार। (10)

तुमको बिन जाने जो कलेश, पाये सो तुम जानत जिनेश,
पशु नारक नर सुरगति मँझार, भव धर-धर मर्यो अनत बार। (11)

अब काललब्धि बलतै दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल,
मन शात भयो मिटि सकल द्वन्द, चाख्योस्वातमरस दुख निकद। (12)

तातै अब ऐसी करहु नाथ, बिछुरै न कभी तुव चरण साथ,
तुम गुणगण को नहि छेव देव, जग तारन को तुव विरद एव। (13)

आतम के अहित विषय कषाय, इनमे मेरी परिणति न जाय,
मै रहूँ आपमे आप लीन, सो करो होउँ ज्यो निजाधीन। (14)

मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश,
मुझ कारज के कारन सु आप, शिव करहु हरहु मम मोहताप। (15)

शशि शातिकरन तपहरन हेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत,
पीवत पीयूष ज्यो रोग जाय,त्यो तुम अनुभवतै भव नशाय। (16)

त्रिभुवन तिहूकाल मँझार कोय, नहि तुम बिन निज सुखदाय होय,
मो उर यह निश्चय भयो आज, दुख जलधि उतारन तुम जहाज। (17)

तुम गुणगणमणि गणपति, गणत न पावहि पार,
'दौल' स्वल्पमति किम कहै, नमूँ त्रियोग सँभार। (18)

दर्शन-स्तुति

अति पुण्य उदय मम आया, प्रभु तुमरा दर्शन पाया,
अब तक तुमको बिन जाने, दुख पाये निज गुण हाने।
पाये अनते दु ख अब तक, जगत को निज जानकर,
सर्वज्ञ भाषित जगत हितकर, धर्म नहि पहिचान कर।

भव बधकारक सुखप्रहारक, विषय मे सुख मानकर,
निज पर विवेचक ज्ञानमय, सुखनिधि-सुधा नहि पानकर।
तव पद मम उर मे आये, लखि कुमति विमोह पलाये,
निज ज्ञान कला उर जागी, रुचि पूर्ण स्वहित मे लागी।

रुचि लगी हित मे आत्म के, सतसग में अब मन लगा,
मन मे हुई अब भावना, तव भक्ति मे जाऊँ रँगा।
प्रिय वचन की हो टेव, गुणिगण गान मे ही चित पगै,
शुभ शास्त्र का नित हो मनन, मन दोष वादनतै भगै।

कब समता उर मे लाकर, द्वादश अनुप्रेक्षा भाकर,
ममतामय भूत भगाकर, मुनिव्रत धारूँ वन जाकर।
धरकर दिगम्बर रूप कब, अठ-बीस गुण पालन करूँ,
दो-बीस परिषह सह सदा, शुभ धर्म दस धारन करूँ।

तप तपूँ द्वादश विधि सुखद नित, बध आस्त्रव परिहरूँ,
अरू रोकि नूतन कर्म सचित, कर्म रिपुको निर्जरूँ।

कब धन्य सुअवसर पाऊँ, जब निज मे ही रम जाऊँ,
कर्तादिक भेद मिटाऊँ, रागादिक दूर भगाऊँ।

कर दूर रागादिक निरन्तर, आत्म को निर्मल करूँ,
बल ज्ञान दर्शन सुख अतुल, लहि चरित क्षायिक आचरूँ।
आनन्दकन्द जिनेन्द्र बन, उपदेश को नित उच्चरूँ,
आवै 'अमर' कब सुखद दिन, जब दु खद भवसागर तरूँ।

हर हरकत की मूल मे, कारण सच्चा देख,
बिन कारण ससार मे, पत्ता हिले न एक।
जैसा तेरा आचरण, फल वैसा ही होय,
दुराचरण दु ख ही बढे, सदाचरण सुख होय।
जो चाहे सुख ना घटे, होय दु ख का नाश,
दासी बन तृष्णा रहे, बन मत तृष्णा-दास।
कुदरत का कानून है, इससे बचा न कोय,
मैले मन दुखिया रहे, निर्मल सुखिया होय।

देव-स्तुति

प्रभु पतित पावन, मै अपावन, चरन आयो सरन जी,
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरन जी।

तुम ना पिछान्यो आन मान्यो, देव विविध प्रकार जी,
या बुद्धिसेती निज न जान्यो, भ्रम गिन्यो हितकार जी।

भव विकट वन मे करम वैरी, ज्ञान धन मेरो हर्‌यो,
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिर्‌यो।

धन घडी यो धन दिवस यो ही, धन जनम मेरो भयो,
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभु को लख लयो।

छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासापै धरै,
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुण जुत, कोटि रवि छविको हरै।

मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदय रवि आतमभयो,
मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रंक चितामणि लयो।

मै हाथ जोड नवाय मस्तक, वीनऊँ तुव चरन जी,
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारन - तरन जी।

जाचूँ नही सुर वास पुनि, नरराज परिजन साथ जी,
'बुध' जाचहुँ तुव भक्ति भव-भव, दीजिये शिवनाथ जी।

પ્રભુ - સ્તુતિ

જગના અગાધ તિમિરે પ્રભુ ! સુર્ય તુ છે,
અજ્ઞાન-અંધ જગનુ પ્રભુ ! નેત્ર તુ છે;
ભવસાગરે પતિતનુ પ્રભુ ! નાવ તુ છે,
માતા, પિતા, ગુરુ, જિનેશ્વર ! સર્વ તુ છે
તીર્થંકરો જગતના જયવત વર્તો,
ૐકારનાદ જિનનો જયવત વર્તો;
જિનના સમોસરણ સૌ જયવત વર્તો,
ને તીર્થ ચાર જગમા જયવત વર્તો.

જીનેન્દ્ર - સ્તુતિ

સન્માર્ગ દર્શી, બોધિદાતા, કૃપા અતિ વર્ષાવતા,
આશ્રય અને કરુણા થકી, અમ રકને ઉદ્ધારતા;
વિમળજ્ઞાની શાન્તમૂર્તિ, દિવ્ય ગુણે દિપતા,
જિનરાજજી તુમ ચરણમા, દિન ભાવથી હો વદના
ઈમ સકલસુખકર, દુરિત ભયહર, વિમલ લક્ષણ ગુણધરો,
પ્રભુ અજર, અમર, નરેન્દ્રવદિત, વિનવ્યો સીમધરો,
નિજ નાદતર્જિત, મેઘગર્જિત, ધૈર્યનિર્જિત, મદરો,
રે ભકતજન હુ, ચરણસેવક, સીમધરપ્રભુ જય કરો

आराधना पाठ

मै देव नित अरहत चाहूॅ, सिद्ध का सुमिरन करौ,
मै सूर गुरु मुनि तीन पद ये, साधुपद हिरदय धरौं।
मै धर्म करुणामयी चाहूँ, जहॉ हिसा रंच ना,
मै शास्त्र ज्ञान विराग चाहूँ, जासु मे परपंच ना। (1)

चौबीस श्री जिनदेव चाहूँ, और देव न मन बसै,
जिन बीस क्षेत्र विदेह चाहूॅ, वदिते पातक नसै।
गिरनार शिखर सम्मेद चाहूँ, चम्पापुरी पावापुरी,
कैलाश श्री जिनधाम चाहूॅ, भजत भाजे भ्रम जुरी। (2)

नव तत्व का सरधान चाहूॅ, और तत्व न मन धरौ,
षट् द्रव्य गुण परजाय चाहूॅ, ठीक तासौ भय हरो।
पूजा परम जिनराज चाहूॅ, और देव नही कदा,
तिहुॅकाल की मै जाप चाहूँ, पाप नहि लागे कदा। (3)

सम्यक्त्व दर्शन ज्ञान चारित्र, सदा चाहूॅ भाव सो,
दशलक्षणी मै धर्म चाहूँ, महा हर्ष उछाव सो।
सोलह जु कारण दुख निवारण, सदा चाहूॅ प्रीति सो,
मै नित अठाई पर्व चाहूँ, महामगल रीति सो। (4)

मै वेद चारो सदा चाहूॅ, आदि अन्त निवाह सो,
पाये धरम के चार चाहूॅ, अधिक चित्त उछाह सो।
मै दान चारो सदा चाहूँ, भुवनवशि लाहो लहूॅ,
आराधना मै चार चाहूॅ, अन्त मे ये ही गहूॅ। (5)

भावना बारह जु भाऊँ, भाव निरमल होत है,
मै व्रत जु बारह सदा चाहूँ, त्याग भाव उद्योत है।
प्रतिमा दिगम्बर सदा चाहूँ, ध्यान आसन सोहना,
वसुकर्म तै मैं छुटा चाहूँ, शिव लहूँ जहँ मोह ना। (6)

मे साधुजन को संग चाहूँ, प्रीति तिनही सो करौ,
मै पर्व के उपवास चाहूँ, आरम्भ मै सब परिहरौं।
इस दुखद पचमकाल माही, कुल श्रावक मै लह्यौ,
अरु महाव्रत धरि सकौ नाही, निबल तन मैने गह्यौ। (7)

आराधना उत्तम सदा चाहूँ, सुनो जिनराय जी,
तुम कृपानाथ अनाथ 'द्यानत' दया करना न्याय जी।
वसुकर्म नाश विकास, ज्ञान प्रकाश मुझको दीजिये,
करि सुगति गमन समाधिमरन, सुभक्ति चरनन दीजिये। (8)

निज आत्मा निश्चय - शरण व्यवहार से परमातमा,
जो खोजता पर की शरण वह आतमा बहिरातमा,
ध्रुवधाम से जो विमुख वह पर्याय ही संसार है,
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है।

मेरी भावना

जिसने राग-द्वेष-कामादिक जीते, सब जग जान लिया,
सब जीवो को मोक्षमार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया।
बुद्ध, वीर, जिन, हरि, हर, ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो,
भक्ति भाव मे प्रेरित हो, यह चित्त उसी मे लीन रहो। (1)

विषयो की आशा नहि जिनके, साम्य-भाव धन रखते है,
निज-पर के हित साधन मे जो, निशि-दिन तत्पर रहते है।
स्वार्थ-त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते है,
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुख -समूह को हरते है। (2)

रहे सदा सत्सग उन्ही का, ध्यान उन्ही का नित्य रहे,
उन ही जैसी चर्या मे यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे।
नही सताऊँ किसी जीव को, झूँठ कभी नहि कहा करू,
पर-धन-वनिता पर न लुभाऊं, सन्तोषामृत पिया करूँ। (3)

अहकार का भाव न रखूँ, नही किसी पर क्रोध करूँ,
देख दूसरो की बढती को, कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूँ,
बने जहाँ तक इस जीवन मे, औरो का उपकार करूँ। (4)

मैत्री भाव जगत मे मेरा, सब जीवो से नित्य रहे,
दीन-दुखी जीवो पर मेरे, उर से करूणा-स्त्रोत बहे।
दुर्जन क्रूर - कुमार्गरतों पर, क्षोभ नही मुझको आवे,
साम्य-भाव रक्खूँ मै उन पर, ऐसी परिणति हो जावे। (5)

गुणीजनो को देख हृदय मे, मेरे प्रेम उमड आवे,
बने जहॉ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।
होऊँ नही कृतघ्न कभी मै, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषो पर जावे। (6)

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
लाखो वर्षो तक जीऊँ या, मृत्यु आज ही आ जावे।
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे,
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे। (7)

होकर सुख मे मग्न न फूले, दुख मे कभी न घबरावे,
पर्वत नदी-श्मशान-भयानक, अटवी से नहि भय खावे।
रहे अडोल - अकम्प निरन्तर, यह मन दृढतर बन जावे,
इष्ट-वियोग-अनिष्ट योग मे, सहनशीलता दिखलावे। (8)

सुखी रहे सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे,
बैर पाप अभिमान छोड़ जग, नित्य नये मंगल गावे।
घर - घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावे,
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना, मनुज-जन्म फल सब पावे। (9)

ईति-भीति व्यापै नहि जग मे, वृष्टि समय पर हुआ करे,
धर्म-निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे।
रोग-मरी-दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे,
परम अहिसा-धर्म जगत मे, फैल सर्व हित किया करे। (10)

फैले प्रेम परस्पर जग मे, मोह दूर ही रहा करे,
अप्रिय कटुक - कठोर शब्द नहि, कोई मुख से कहा करे।
बनकर सब 'युगवीर' हृदय से, देशोन्नति रत रहा करै,
वस्तु-स्वरूप - विचार खुशी से, सब दुख-सकट सहा करै। (11)

विपदा आयी देख कर, मत तडपै मत रोय,
राख आसरो धरम को, सदा भलो ही होय।
चित्त - मैल त्यागे नही, करे ईश की आश,
यही मोह, यह मूढता, यह बंधन, यह पाश।
शोक -तप्त व्याकुल रहे, मूरख मूढ अजान,
लोक -चक्र उलझे नही, पंडित धीर सुजान।
निज करनी सुधरी नही, करी पराई आश,
धर्म -चक्र छूटा, बॅधा लोक-चक्र के पाश।

શ્રી શાન્તિનાથ સ્તુતિ

શારદમાય નમુ શીર નામિ,
હું ગુણ ગાઉ ત્રિભૂવનકા સ્વામિ;
શાન્તિ શાન્તિ જપે જે કોઇ,
તે ઘેર શાન્તિ સદા સુખ હોય. (1)

શાન્તિ જપી જે કીજે કામ,
સોહી કામ હોવે અભિરામ,
શાન્તિ જપી પરદેશ સિધાવે,
તે કુશલે કમલા લેઈ આવે (2)

ગર્ભથકી પ્રભુ માર નિવારી,
શાન્તિજી નામ દિયો હિતકારી;
જે નર શાન્તિ તણા ગુણ ગાવે,
ઋદ્ધિ અચિંત્ય તે નર પાવે (3)

જે નરકો પ્રભુ શાન્તિ સહાય,
તે નરકો કછુ આર્તિ નાંહિ;
જો કછુ વછે સો હી પૂરે,
દુઃખ દારિદ્ર મિથ્યામતિ ચૂરે. (4)

અલખ નિરજન જ્યોત પ્રકાશી,
ઘટ ઘટ અંતર કે પ્રભુ વાસી;
સ્વામી-સ્વરૂપ કહ્યું નવિ જાયે,
કહેતા મુજ મન અચરજ થાયે. (5)

ડાલ દીયા સબ હી હથીઆરા,
જીવ્યા મોહ તણા દલ સારા;
નારી તજી શિવસુરગ રાચ્યો,
રાજ તજ્યો તો ભી સાહેબ સાચો. (6)

મહા બલવત કહીજે દેવા,
કાયર કુંથું એક હણેવા;
ઋદ્ધિ સબલ પ્રભુ પાસ કહી જે,
તો ભી ભીખ્ખુ નામ કહીજે. (7)

નિદક પૂજક કો સમ જાનત,
પણ સેવક કો હૈ સુખદાયક;
જીત પરિગ્રહ હુઆ જગ નાયક,
નામ યતિ સર્વ સિદ્ધિ દાયક. (8)

શત્રુ - મિત્ર સમચિત્ત ગણીજે,
નામદેવ અરિહંત ભણીજે;
સકલ જીવ હિતવંત કહીજે,
સેવક જાણી મહાપદ દીજે. (9)

સાગર જૈસા હોત ગભીરા,
દુષણ એક ન માંહી શરીરા;
મેરુ અચલ જેમ અંતર જામી,
પણ ન રહે પ્રભુ એક હી ઠામી. **(10)**

લોક કહે જિનજી સબ દેખે,
પણ સુપનાંતર કબહુ ન પેખે;
રીષ વિના બાઇસ પરિષહા,
સેના જીતી તે જગદીશા. **(11)**

માનવિના જગ આણ મનાઇ,
માયા વિના શિવ સુખ લાઇ;
લોભ વિના ગુણરાશી ગ્રહિજે,
ભિખ્ખુ ભાવે સમવસરણ સેવીજે. **(12)**

નિર્ગ્રંથ પણે શીર છત્ર ધરાવે,
નામ યતિ પણ ચમર ઢળાવે;
અભયદાન - દાતા સુખ કારણ,
આગળ ચક્ર ચાલે અરિદારણ. **(13)**

શ્રી જિનરાજ દયાળ ભણીજે,
કર્મ શત્રુકો નાશ કરીજે;
ચૌવિહ સઘ તીરથ સ્થાપ,
લક્ષ્મી ઘણી દેખે નવી આપે. **(14)**

વિનયવત ભગવંત કહાવે,
નાહી કિસીકો શીશ નમાવે;
અકંચનકો બિરૂદ ધરાવે,
પણ સુવર્ણપદ - પંકજ ઠાવે. (15)

રાગ નહિ પણ સેવક તારો,
વ્દેષ નહિ નગુણા સગ વાંરો;
તજી આરભ નિજ આત્મધ્યાવો,
શીવ રમણીકો સાથ ચલાવો. (16)

તેરો મહિમા અદ્દ્ભૂત કહીજે,
તેરા ગુણકો પાર ન લીજે;
તુ પ્રભુ સમરથ સાહેબ મેરા,
હુ મન મોહન સેવક તોરા. (17)

તું રે ત્રિલોક તણો પ્રતિપાળ,
હુ છું અનાથ ને તું છો દયાળ;
તુ શરણાગત રાખત ધીરા,
તું પ્રભુ તારક છો બડવીરા. (18)

તુ હી સમોવડ ભાગ જ પાયો,
તો મેરો કાજ સધ્યો રે સવાયો;
કરજોડી પ્રભુ વિનવુ તુમ શુ,
કરો કૃપા જિનવરજી અમશુ. (19)

જન્મ - મરણના ભય નિવારો,
ભવસાગરથી પાર ઉતારો;
શ્રી હસ્તિનાપુર મંડળ સોહે,
ત્યાં શ્રી શાન્તિ સદા મન મોહે (20)

મહા સુખ સાગર જ્ઞાન પ્રસાદ,
શ્રી ગુણ સાગર કરે નિજધ્યાન;
જે નરનારી એક ચિત્તે ગાવે,
તે મનવાંછિત નિશ્ચય પાવે. (21)

ૐ શાન્તિ શાંતિ શાન્તિ

શ્રી જિન આરતિ

જય અંતરયામી સ્વામી જય અંતરયામી;
દુઃખ હારી સુખકારી, પ્રભુ તૂ ત્રિભુવન સ્વામી.

નાથ નિરંજન સબ દુ ખ ભજન, સંતન-આધારા;
પાપ-નિકદન ભવ દુ ખ ભજન, સપત્તિ-દાતારા.

કરુણાસિધુ દયાલુ દયાનિધિ, જય જય ગણધારી;
વાછિત પૂરણ શ્રી જિન સબજન, સબજન હિતકારી.

જ્ઞાન-પ્રકાશી શિવપુરવાસી, અવિનાશી અવિકાર;
અલખ અગોચર ત્રિભૂમેં,અવિચલ શિવરમણી ભરતાર.

વિમલ કૃતારથ કલમલહારક, તુમ હો દીન દયાલ;
જય જયકારક તારક સ્વામી, ષટ્ જીવન રક્ષપાલ.

ન્યામત ગુણ ગાવે પાપ નશાવે,ચરનન શિરનાવે;
પુનિ પુનિ અરજ સુનાવે સેવક, શિવ-કમલા પાવે

पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु, णमो अरिहताण, णमो सिद्धाण, णमो आइरियाण, णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्वसाहूण।
(ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः, पुष्पाजलि क्षिपामि)

चत्तारि मगल - अरिहंता मगल, सिद्धा मगल, साहू मगल, केवलिपण्णत्तो धम्मो मगल। चत्तारि लोगुत्तमा-अरिहता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरण पव्वज्ञामि - अरिहते सरण पव्वज्ञामि, सिद्धे सरण पव्वज्ञामि, साहू सरण पव्वज्ञामि, केवलिपण्णत्त धम्म सरण पव्वज्ञामि।
(ॐ नमोऽर्हते स्वाहा, पुष्पाजलि क्षिपामि)

मंगल विधान

अपवित्र पवित्रो वा सुस्थितो दु.स्थितोऽपि वा,
ध्यायेत्पञ्च नमस्कारं सर्व पापै प्रमुच्यते। (1)

अपवित्र पवित्रो वा सर्वावस्था गतोऽपि वा,
य स्मरेत्परमात्मान स बाह्याभ्यन्तरे शुचि। (2)

अपराजितमन्त्रोऽय सर्व विघ्न विनाशन.,
मगलेषु च सर्वेषु प्रथम मगल मत'। (3)

एसो पच णमोयारो सव्व पावप्पणासणो,
मगलाण च सव्वेसि पढम होई मगल। (4)

अर्हमित्यक्षर ब्रह्मवाचक परमेष्ठिन.,
सिद्धचक्रस्य सद्बीज सर्वत प्रणमाम्यहम्। (5)

कर्माष्टक - विनिर्मुक्त मोक्ष - लक्ष्मी निकेतनम्,
सम्यक्त्वादि - गुणोपेत सिद्धचक्र नमाम्यहम्। (6)

विघ्नौघा प्रलय यान्ति शाकिनी - भूत - पन्नगा,
विष निर्विषता याति स्तूयमाने जिनेश्वरे। (7)

(पुष्पाजलि क्षिपेत्)

जिनसहस्त्रनाम अर्घ्य

उदक-चन्दन-तन्दुलपुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकै,
धवल-मङ्गल-गान-रवाकुले जिन-गृहे जिननाथमह यजे।
(*ॐ ह्री श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा*)

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

श्रीमज्जिनेन्द्र - मभिवन्द्य जगत्त्रयेश,
स्याद्वाद - नायकमनन्त - चतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूलसघ - सुदृशा सुकृतैकहेतु,
जैनेन्द्र - यज्ञ - विधिरेष मयाऽभ्यधायि ।

स्वस्ति त्रिलोक - गुरवे जिन - पुङ्गवाय,
स्वस्नि स्वभाव - महिमोदय - सुस्थिताय।
स्वस्ति प्रकाश - सहजोर्ज्झि - दृङ् मयाय,
स्वस्ति प्रसन्न - ललिनाद्भुत - वैभवाय ।

स्वस्त्युच्छलद्विमल - बोधसुधा प्लवाय,
स्वस्ति स्वभाव - परभाव -विभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोकविततैक - चिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल - सकलायत-विस्तृताय।

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूप्य,
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकाम ।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वलान्,
भूतार्थ - यज्ञ - पुरुषस्य करोमि यज्ञम्।

अर्हन् पुराणपुरुषोत्तम पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।
अस्मिञ्ज्वद्विमल - केवल - बोधवह्नौ,
पुण्य समग्रमहमेकमना जुहोमि।

(ॐ यज्ञविधि प्रतिज्ञायै जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

स्वस्ति मंगलपाठ

श्रीवृषभो न स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजित ।

श्रीसम्भव स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दन ।

श्रीसुमति स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभ ।

श्रीसुपार्श्व स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभ ।

श्रीपुष्पदन्त स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतल ।

श्रीश्रेयान्स स्वस्ति, स्वस्ति श्री वासुपूज्य ।

श्रीविमल स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्त ।

श्रीधर्म स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्ति ।

श्रीकुन्थु स्वस्ति, स्वस्ति श्री अरनाथ ।

श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रत ।

श्रीनमि स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथ ।

श्रीपार्श्व स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमान ।

(पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्)

देव-शास्त्र-गुरु पूजन

केवल-रवि किरणो से जिसका, सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर,
उस श्री जिन-वाणी मे होता, तत्वो का सुन्दरतम दर्शन ।
सद्दर्शन-बोध-चरण-पथ पर, अविरल जो बढ़ते हैं मुनिगण,
उन देव, परम-आगम, गुरु को शत-शत वन्दन, शत-शत वन्दन।

ॐ ह्रीं श्री देव - शास्त्र - गुरुसमूह अत्र अवतर अवतर सवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्री देव - शास्त्र गुरुसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ ।
ॐ ह्री श्री देव - शास्त्र - गुरुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् ।

इन्द्रिय के भोग मधुर विष-सम, लावण्यमयी कचन काया,
यह सब कुछ जड की क्रीडा है, मैं अब तक जान नहीं पाया।
मैं भूल स्वय निज वैभव को, पर-ममता मे अटकाया हूँ,
अब निर्मल सम्यक् - नीर लिये, मिथ्यामल धोने आया हूँ ।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा।

जड-चेतन की सब परिणति प्रभु ! अपने-अपने में होती है,
अनुकूल कहे प्रतिकूल कहे, यह झूठी मन की वृत्ती है ।
प्रतिकूल सयोगो में क्रोधित, होकर ससार बढाया है,
सन्तप्त हृदय प्रभु ! चन्दन सम, शीतलता पाने आया है।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो ससारताप विनाशनायचदन निर्वपामीति स्वाहा ।

उज्ज्वल हूँ कुन्द-धवल हूँ प्रभु पर से न लगा हूँ किञ्चित् भी,
फिर भी अनुकूल लगे उन पर, करता अभिमान निरन्तर ही ।

जड पर झुक-झुक जाता चेतन, की मार्दव की खण्डित काया,
निज शाश्वत अक्षत-निधि पाने, अब दास चरण रज मे आया।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यह पुष्प सुकोमल कितना है, तन मे माया कुछ शेष नही,
निज अन्तर का प्रभु ! भेद कहूँ, उसमे ऋजुता का लेश नहीं।
चिंतन कुछ फिर सभाषण कुछ, वृत्ति कुछ की कुछ होती है,
स्थिरता निज मे प्रभु पाऊँ जो, अन्तर का कालुष धोती है।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो काम-बाण-विध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।

अब तक अगणित जड द्रव्यो से, प्रभु ! भूख न मेरी शान्त हुई,
तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही।
युग-युग से इच्छा सागर मे, प्रभु ! गोते खाता आया हूँ,
चरणो मे व्यजन अर्पित कर, अनुपम रस पीने आया हूँ।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।

मेरे चैतन्य सदन मे प्रभु ! चिर व्याप्त भयकर अधियारा,
श्रुत-दीप बुझा हे करुणानिधि ! बीती नहि कष्टो की कारा।
अतएव प्रभो ! यह ज्ञान-प्रतीक, समर्पित करने आया हूँ,
तेरी अन्तर लौ से निज अन्तर दीप जलाने आया हूँ।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा।

जड कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी,
मैं रागी द्वेषी हो लेता, जब परिणति होती जड केरी।
यो भाव-करम या भाव-मरण, सदियो से करता आया हूँ,
निज अनुपम गध-अनल से प्रभु, पर-गध जलाने आया हूँ।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा।

जग मे जिसको निज कहता मै, वह छोड मुझे चल देता है,
मै आकुल व्याकुल हो लेता, व्याकुल का फल व्याकुलता है ।
मैं शान्त निराकुल चेतन हूँ, है मुक्ति-रमा सहचर मेरी,
यह मोह तडक कर टूट पडे, प्रभु ! सार्थक फल पूजा तेरी ।

ॐ ह्रीं श्री देव - शास्त्र - गुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षण भर निज-रस को पी चेतन, मिथ्या-मल को धो देता है ,
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनन्द अमृत पीता है ।
अनुपम सुख तब विलसित होता, केवल-रवि जगमग करता है ,
दर्शन बल पूर्ण प्रगट होता, यह ही अर्हन्त अवस्था है ।
यह अर्घ्य समर्पण करके प्रभु ! निज गुण का अर्घ्य बनाऊँगा ,
और निश्चित तेरे सदृश प्रभु ! अर्हन्त अवस्था पाऊँगा ।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

भव वन मे जी भर घूम चुका, कण-कण को जी भर-भर देखा,
मृग-सम मृग-तृष्णा के पीछे, मुझको न मिली सुख की रेखा।
झूँठे जग के सपने सारे, झूँठी मन की सब आशाये,
तन-जीवन-यौवन अस्थिर है, क्षण-भगुर पल मे मुरझाये ।
सम्राट महाबल सेनानी, उस क्षण को टाल सकेगा क्या?
अशरण मृत काया में हर्षित, निज जीवन डाल सकेगा क्या?
ससार महा दुखसागर के, प्रभु दुखमय सुख आभासो मे,
मुझको न मिला सुख क्षण भर भी, कचन-कामिनि प्रासादो मे।

मैं एकाकी एकत्व लिये, एकत्व लिये सब ही आते,
तन धन को साथी समझा था, पर ये भी छोड चले जाते।
मेरे न हुए ये, मैं इन से, अति भिन्न अखण्ड निराला हूँ,
निज में पर से अन्यत्व लिये, निज सम रस पीने वाला हूँ।
जिसके श्रृगारों में मेरा, यह मँहगा जीवन घुल जाता,
अत्यन्त अशुचि जड काया से, इस चेतन का कैसा नाता।
दिन रात शुभाशुभ भावो से, मेरा व्यापार चला करता,
मानस वाणी और काया से, आस्रव का द्वार खुला रहता।
शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अन्तस्तल,
शीतल समकित किरणे फूटे, सवर से जागे अन्तर्बल।
फिर तप की शोधक वह्नी जगे, कर्मों की कडियाँ टूट पडे,
सर्वांग निजात्म प्रदेशो से, अमृत के निर्झर फूट पडें।
हम छोड चलें यह लोक तभी, लोकान्त विराजें क्षण में जा,
निज लोक हमारा वासा हो, शोकात बने फिर हमको क्या।
जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभो! दुर्नय-तम सत्वर टल जावे,
बस ज्ञाता दृष्टा रह जाऊँ, मद - मत्सर-मोह विनश जावे।
चिर रक्षक धर्म हमारा हो, हो धर्म हमारा चिर साथी,
जग में न हमारा कोई था, हम भी न रहे जग के साथी।
चरणो मे आया हूँ प्रभुवर! शीतलता मुझको मिल जावे,
मुर्झाई ज्ञान-लता मेरी, निज अन्तर्बल से खिल जावे।
सोचा करता हूँ भोगो से, बुझ जावेगी इच्छा ज्वाला,
परिणाम निकलता है लेकिन, मानो पावक में घी डाला।
तेरे चरणो की पूजा से, इन्द्रिय सुख को ही अभिलाषा,

अब तक न समझ ही पाया प्रभु ! सच्चे सुख की भी परिभाषा।
तुम तो अविकारी हो प्रभुवर ! जग में रहते जग से न्यारे,
अतएव झुके तव चरणो में, जग के माणिक मोती सारे ।
स्याद्वादमयी तेरी वाणी, शुभनय के झरने झरते हैं,
उस पावन नौका पर लाखो, प्राणी भव-वारिधि तिरते हैं ।
हे गुरुवर ! शाश्वत सुख दर्शक, यह नग्न स्वरूप तुम्हारा है ,
जग की नश्वरता का सच्चा, दिग्दर्शन करने वाला है ।
जब जग विषयो मे रच-पच कर, गाफिल निद्रा मे सोता हो,
अथवा वह शिव के निष्कटक, पथ मे विषकटक बोता हो ।
हो अर्द्ध-निशा का सन्नाटा, वन में वनचारी चरते हो ,
तब शान्त निराकुल मानस तुम, तत्वो का चितन करते हो ।
करते तप शैल-नदी-तट पर, तरु-तल वर्षा की झडियो में,
समता-रस-पान किया करते, सुख-दु:ख दोनों की घड्यिो में ।
अन्तर्ज्वाला हरती वाणी, मानों झडती हों फुलझडियॉ ,
भव-बन्धन तड-तड टूट पडे, खिल जावे अन्तर की कलियॉ ।
तुम-सा दानी क्या कोई हो, जग को दे दीं जग की निधियॉं,
दिन रात लुटाया करते हो, सम-शम की अविनश्वर मणियॉ ।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये महार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

हे निर्मल देव ! तुम्हे प्रणाम, हे ज्ञान-दीप आगम ! प्रणाम,
हे शान्ति-त्याग के मूर्तिमान, शिव-पथ-पथी गुरुवर ! प्रणाम ।

(इति पुष्पान्जलि क्षिपेत्)

पंच-परमेष्ठी पूजन

अर्हन्त सिद्ध आचार्य नमन, हे उपाध्याय हे साधु नमन,
जय पच परम परमेष्ठी जय, भव सागर तारण हार नमन ।
मन-वच-काया पूर्वक करता हूँ, शुद्ध हृदय से आह्वानन,
मम हृदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ, सन्निकट होहु मेरे भगवन ।
निज आत्मतत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्ट द्रव्य करता पूजन,
तुम चरणो की पूजन से प्रभु, निज सिद्ध रूप का हो दर्शन।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिन ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्री पचपरमष्ठिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ ।
ॐ ह्रीं श्री पचरपमेष्ठिन ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् ।

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ,
तुम सम उज्ज्वलता पाने को, उज्जवल जल भरकर लाया हूँ।
मैं जन्म-जरा-मृतु नाश करूँ, ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी,
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव - दु ख मेटो अन्तर्यामी ।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

ससार ताप मे जल-जल कर, मैंने अगणित दु ख पाये है,
निज शान्त स्वभाव नहीं भाया, पर के ही गीत सुहाए हैं ।
शीतल चदन हैं भेट तुम्हें, ससार ताप नाशो स्वामी,
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दु ख मेटो अन्तर्यामी ।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो ससारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ।

दु खमय अथाह भवसागर मे, मेरी यह नौका भटक रही,
शुभ-अशुभ भाव की भवरो मे, चैतन्य शक्ति निज अटक रही।
तन्दुल है धवल तुम्हे अर्पित, अक्षयपद प्राप्त करूँ स्वामी,
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु ख मेटो अन्तर्यामी ।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

मैं काम व्यथा से घायल हूँ, सुख की न मिली किंचित् छाया,
चरणो मे पुष्प चढाता हूँ, तुम को पाकर मन हर्षाया।
मैं काम भाव विध्वस करूँ, ऐसा दो शील हृदय स्वामी,
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु ख मेटो अन्तर्यामी ।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो कामबाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।

मैं क्षुधा रोग से व्याकुल हूँ, चारो गति मे भरमाया हूँ,
जग के सारे पदार्थ पाकर भी, तृप्त नहीं हो पाया हूँ ।
नैवेद्य समर्पित करता हूँ, यह क्षुधा रोग मेटो स्वामी,
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु ख मेटो अन्तर्यामी ।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।

मोहान्ध महा - अज्ञानी मैं, निज को पर का कर्ता माना,
मिथ्यातम के कारण मैंने, निज आत्मस्वरूप न पहिचाना ।
मैं दीप समर्पण करता हूँ, मोहान्धकार क्षय हो स्वामी,
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु ख मेटो अन्तर्यामी ।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्मो की ज्वाला धधक रही, ससार बढ रहा है प्रतिपल ,
सवर से आस्रव को रोकूँ, निर्जरा सुरभि महके पल-पल।
मैं धूप चढाकर अब आठो कर्मो का हनन करूँ स्वामी,
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु ख मेटो अन्तर्यामी ।

ॐ ह्री श्री पचपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

निज आत्मतत्त्व का मनन करूँ, चिंतवन करूँ निज चेतन का,
दो श्रद्धा-ज्ञान-चरित्र श्रेष्ठ, सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का।
उत्तम फल चरण चढाता हूँ, निर्वाण महा फल हो स्वामी,
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु ख मेटो अन्तर्यामी ।
ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ।

जल चन्दन अक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाया हूँ,
अब तक के सचित कर्मों का, मैं पुज जलाने आया हूँ।
यह अर्घ्य समर्पित करता हूँ, अविचल अनर्घ्य पद दो स्वामी,
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दु ख मेटो अन्तर्यामी ।
ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार,
अष्टादश दोष रहित जिनवर, अर्हन्त देव को नमस्कार।

अविकल अविकारी अविनाशी, निजरूप निरजन निराकार,
जय अजर अमर हे मुक्तिकत, भगवत सिद्ध को नमस्कार ।

छत्तीस सुगुण से तुम मण्डित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार,
हे मुक्ति वधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार।

एकादश अग पूर्व चौदह के, पाठी गुण पच्चीस धार,
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान, श्री उपाध्याय को नमस्कार।

व्रत समिति गुप्ति चारित्र धर्म, वैराग्य भावना हृदय धार,
हे द्रव्य-भाव सयममय मुनिवर, सर्व साधु को नमस्कार ।

बहु पुण्य सयोग मिला नरतन, जिनश्रुतजिनदेवचरणदर्शन ,
हो सम्यग्दर्शन प्राप्त मुझे, तो सफल बने मानव जीवन।

निज-पर का भेद जानकर मैं, निज को ही निज मे लीन करूँ ,
अब भेदज्ञान के द्वारा मैं, निज आत्म स्वय स्वाधीन करूँ ।

निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परिणति को ही पहचानूँ,
पर-परिणति से हो विमुख सदा, निज ज्ञानतत्व को ही जानूँ।

जब ज्ञान-ज्ञेय-ज्ञाता विकल्प तज, शुक्लध्यान मैं ध्याऊँगा ,
तब चार घातिया क्षय करके, अर्हन्त महापद पाऊँगा ।

है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा, हे प्रभु कब इसको पाऊँगा ,
सम्यक् पूजा फल पाने को, अब निजस्वभाव मे आऊँगा ।

अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु, हे प्रभु मैंने की है पूजन,
तब तक चरणो मे ध्यान रहे, जब तक न प्राप्त हो मुक्ति सदन ।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

हे मगल रूप अमगल हर, मगलमय मगल गान करूँ,
मगल मे प्रथम श्रेष्ठ मगल, नवकार मन्त्र का ध्यान करूँ ।

(इति पुष्पाजलि क्षिपेत्)

श्री चतुर्विंशति जिन पूजा

भव भोगो से होकर विरक्त, प्रभु हुए स्वयम् तुम आत्म मगन,
प्रगटा तब केवलज्ञान सूर्य फिर रहे नहीं विधि के बन्धन ।
तीर्थकर हो जग त्राण किया तुमने पाया नव अभिनन्दन,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर शत् शत् प्रणाम शत् शत् वदन ।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति जिन समूह अत्रावतर अवतर सवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति जिन समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन ।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति जिन समूह अत्र मम सन्निहितो सन्निधिकरणम् ।

भव वन मे भटक रहा भगवन भारी जीवन दुखदाई है,
कर दर्शन नाथ तुम्हारा यह मुझको मेरी सुधि आई है।
मिट जाये मेरा जन्म मरण जल से करता हूँ मै अर्चन,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर आदर्श रहो मेरे प्रतिक्षण ।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि - चतुर्विंशति - जिनेभ्यो जलम् ।

भवताप कहूं क्या प्रभु तुमसे मुझसे न सहन अब होता है,
इसलिए शरण मे आया हूँ तुम पूजन भव - दुख खोता है।
जग का सन्ताप मिटे मेरा चन्दन से करता हूँ अर्चन,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर आदर्श रहो मेरे प्रतिक्षण।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि - चतुर्विंशति - जिनेभ्य चन्दन।

अक्षय न यहा कुछ वसुधा पर जो कुछ है सब क्षय हो जाता,
इस दुखसे बहुत व्यथित व्याकुल मैं त्राण नहीं किंचित पाता।

अक्षय पद मैं अब पा जाऊ अक्षत से करता हूँ अर्चन,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर आदर्श रहो मेरे प्रतिक्षण।
ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि - चतुर्विंशति - जिनेभ्य अक्षतम् ।

यह काम बडा बलशाली है तन-मन को आकुल कर देता,
विषयो के वश कर प्राणी को, उसकी सुबुद्धि को हर लेता।
तुम कामजयी हो इसीलिये पुष्पो से करता हूँ अर्चन,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर आदर्श रहो मेरे प्रतिक्षण।
ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि - चतुर्विंशति - जिनेभ्य पुष्पम् ।

है क्षुधा जगत मे महारोग जिसका न अन्त हो पाया है,
युग युग से इसके वश होकर मैंने अखाद्य सब खाया है।
तुम इस पर विजयी हुए नाथ नैवेद्य चढा करता अर्चन,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर आदर्श रहो मेरे प्रतिक्षण।
ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि - चतुर्विंशति - जिनेभ्य नैवेद्यम् ।

कुछ सरल बात है नहीं मोह-तम प्राणों से यह कढ जाये,
तुमसा वैरागी बनकर ही अपने स्वरूप को पा पाये।
तुम वीतराग हो निर्मोही मैं दीपक से करता अर्चन,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर आदर्श रहो मेरे प्रतिक्षण।
ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि - चतुर्विंशति - जिनेभ्य दीपम् ।

यह कर्मो की माया सारी भव भव मे इसने भरमाया,
योग मिला मुझको मैं शरण तुम्हारी हूँ आया।
तुमने कर्मो को जीत लिया मैं धूप चढा करता अर्चन ,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर आदर्श रहो मेरे प्रतिक्षण।
ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि - चतुर्विंशति - जिनेभ्य धूपम् ।

जीवन की उलझन ने मुझ को उलझन मे इतना उलझाया,
सुलझा न सका उसको अबतक कब शिवफल तुमसा प्रभु पाया।
तुम मुक्त हुये इस उलझन से फल से करता हू मैं अर्चन,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर आदर्श रहो मेरे प्रतिक्षण।
ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि - चतुर्विंशति - जिनेभ्य फलम्।

मिट जाये मेरा जन्म मरण सन्ताप न हो अक्षय पद हो,
निष्काम रहूँ न बुभुक्षा हो ना मोह न यह विधि भयप्रद हो।
बन जाऊ जीवनमुक्त नाथ यह अर्घ्य चढा करता अर्चन,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर आदर्श रहो मेरे प्रतिक्षण।
ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि - चतुर्विंशति - जिनेभ्य अर्घ्यम्।

जयमाला

मैं उर मे लेकर भक्ति भाव हे प्रभुवर करता हूँ प्रणाम,
मिथ्या तम से मैं दूर रहूँ बन जाऊ सम्यक् ज्योति-धाम।
तुम दर्शन पूजन से भगवन हो जाये निज दर्शन ललाम,
तुमसा बन जाऊ इसीलिए करता हूँ मैं सादर प्रणाम।
हे ऋषभनाथ हे आदिनाथ मुझ पर अब तो करुणा कर दो,
प्रभु अजितनाथ मेरे उर का चिरसचित सब सशय हर दो।
सभव जिन मुझ पर हो दयालु सब काम असभव बन जाये,
भज अभिनन्दन प्रभु को निशि दिन नव जीवन अभिनदन पाये।
श्री सुमति सुमति मेरी करदो मिथ्या मति हो न कभी मेरी,
भव पार करो प्रभु पद्म प्रभु अब और न हो पाये देरी।
भगवन सुपार्श्व मेरे भव के सब पाश नाश कर दो सत्वर,
चन्द्रप्रभु मेरे इस उर का सब शाप ताप हरलो अघहर।
श्री सुविधिनाथ दो सुविधि बता मेरे टूटे सब विधि बन्धन,
सन्तप्त हृदय शीतल कर दो शीतल जिन मेरा सुन क्रदन।

हे श्रेयनाथ दो मुझे श्रेय भव बाधा का करदूँ भजन,
मेरे उर के दृग खुल जाये हे वासुपूज्य दो वह अजन।
श्री विमल विमल पद दो मुझको युग युग से भूला भटका हूँ,
करदो अनत सब कष्ट अन्त भव भव में आ आ अटका हूँ।
पथ धर्मनाथ अब बतलादो शाश्वत सुख मुझको मिल जाये,
प्रभु शान्तिनाथ मेरे आकुल उर मे सुखशान्ती छा जाये।
हे कुन्थुनाथ होकर कृपालु मुझ पर भी तनिक कृपा कर दो,
श्री अरहनाथ अब तो मेरे वसु अरि का बल विक्रम हरदो।
मेरे मन से यह मोह मल्ल हे मल्लिनाथ अब दूर करो,
मुनिसुव्रतनाथ सुनो विनती तृष्णा मेरी चकचूर करो।
नमिनाथ तुम्हारे चरणों में मैं नमन कर रहा दुखियारा,
हे नेमिनाथ अब बाह गहो उद्धार करो मैं हू हारा।
तुम नाथ अनाथो के अपने हो पारसनाथ सुनो मेरी,
शिवधाम मुझे दो वर्धमान मेटो मेरी भव भव फेरी।
'कुमरेश' तुम्हारा दास प्रभो अब तो मुझ पर करूणा कर दो,
बन जाए यह जीवन सुखमय मुझको प्रभुवर ऐसा वर दो।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि - चतुर्विंशति - जिनेभ्यो पूर्णार्घ्यम्।

प्रेरणा

जो भक्ति भाव से प्रेरित हो पूजन करता है जिनवर की,
उसको सुधि आ जाती अपनी ममता नहिं रहती है पर की।
जग का जजाल न भाता हैं तृष्णा मिट जाती है उर की,
कर्मों के बन्धन हो ढीले मिल जाय राह भी शिवपुर की।

શ્રી આદિનાથ જિન પૂજા

કર્મભૂમિકી આદિ રિષભ જિનવર ભયે,
ધર્મપથ દરશાય સકલ જગ સુખ દયે,
તિનકે પદ ઉર ધ્યાઇ હરષ મનમેં ધરું ,
અત્ર તિષ્ઠ જિનરાજ ચરણ પૂજા કરુ

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્ર ! અત્ર અવતર સંવૌષ્ટ

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્ર ! અત્ર તિષ્ઠ ઠ. ઠ સ્થાપન

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્ર ! અત્ર મમ સન્નિહિતા ભવ વષટ્

પરમ પાવન ઉજ્જવલ લાયકે, જલ જિનેશ્વર ચરણ ચઢાયકે;
જનમ મરણ ત્રિદોષ સબૈ હરુ, રિષભદેવ ચરન પૂજા કરુ

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય જન્મજરામૃત્યુવિનાશનાય જલ

સરસ ચદન ગધ સુહાવનો, પરમ શીતલ ગુણ મન ભાવનો,
જન્મતાપ તૃષાદુઃખકો હરુ, રિષભદેવ ચરનપૂજા કરુ

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય ભવતાપવિનાશનાય ચદન

શરદ ઈન્દુ સમાન સુહાવનો, અમલ અક્ષત સ્વચ્છ પ્રભાવનો,
સહજ રુપ સુધી રમણી વરુ, રિષભદેવ ચરનપુજા કરુ

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય અક્ષયપદ પ્રાપ્તયે અક્ષત

કુસુમરત્ન સુવર્ણમઇ કરો, કનક ભાજનમેં બહુતે ભરે;
મદનબાન મહા દુઃખકો હરું, રિષભદેવ ચરનપૂજા કરું.
ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય કામબાણવિધ્વંસનાય પુષ્પં.

સરસ મોહન પાવક લીજિયે, ચરુ અનેક પ્રકાર સુકીજિયે;
અસદવેદ્ય ક્ષુધા દુઃખકો હરુ, રિષભદેવ ચરનપૂજા કરું.
ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય ક્ષુધારોગવિનાશનાય નૈવેદ્ય

રતનદીપ અમોલક લીજિયે, નિજ સુયોગ્ય મનોહર કીજિયે;
અતુલ મોહમહાતમ કો હરુ રિષભદેવ ચરનપૂજા કરું.
ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય મોહાંધકારવિનાશનાય દીપ

સરસ ધૂપ સુગધ સુહાવની, અગર આદિક દ્રવ્ય સુપાવની;
ધૂપ ખેય દુખદ વિધિકો હરુ, રિષભદેવ ચરનપૂજા કરું.
ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય અષ્ટકર્મદહનાય ધૂપ

સરસ મિષ્ટ કલાવલિ લીજિયે, ચરણ જિનવર ભેટ કરીજિયે;
સહજ રૂપ સુધી રમણી વરુ, રિષભદેવ ચરનપૂજા કરુ.
ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય મોક્ષફલપ્રાપ્તયે ફલ

જલફલાદિક દ્રવ્ય મિલાયકે, કનકથાલ સુ અર્ઘ બનાયકે;
નિજ સ્વભાવ અરી વિધિકો હરું, રિષભદેવ ચરનપૂજા કરું.
ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય અનર્ઘ્યપદપ્રાપ્તયે અર્ઘં

પંચકલ્યાણક

અષાઢ વદી દ્વિતીયા જાન, તજો સરવારથસિદ્ધિ વિમાન;
ભયૌ ગરભાગમ મગલ સોય, નમૂં જિનકો નિત હર્ષિત હોય.

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય અષાઢવદીદ્વિતીયાયાં ગર્ભ કલ્યાણકપ્રાપ્તાય અર્ઘ્યં

સુચૈત વદી નવમી દિન જાન, ભયૌ શુભ તા દિન જન્મકલ્યાન;
સરાસુર ઇંદ્ર શચીજુત આય, કરૌ ગિરશીસ મહોત્સવ જાય.

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય ચૈત્રવદીનવમ્યાં જન્મકલ્યાણક-પ્રાપ્તાય અર્ઘ્યં

વદી નવમી શુભ ચૈત બતાય, પ્રભુ ઢિગ દેવ રિષીશ્વર આય;
કરી બહુ ભકિત નવાય સુભાલ , લયૌ તપ તાદિન શ્રી જિન હાલ.

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય ચૈત્રવદીનવમ્યાં તપકલ્યાણક પ્રાપ્તાય અર્ઘ્યં

વદી શુભ ગ્યારસ ફાલ્ગુન જાન, સુ તાદિન ઘાતિ હને ભગવાન;
કરૌ વર કેવલજ્ઞાનપ્રકાશ, હરો જગકો ભ્રમ મોહવિલાસ.

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય ફાલ્ગુનવદી એકાદશ્યાં જ્ઞાન કલ્યાણકપ્રાપ્તાય અર્ઘ્યં

વદી શુભ માઘ ચતુર્દસિ જાન, લયૌ પ્રભુને શિવથાન મહાન;
કરૌ બહુ ઉત્સવ ઈંદ્ર નરેંદ્ર ભરૌ મમ આશ સદા જિનચદ્ર.

ૐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય મહાવદી ચતુદસ્યા મે।ક્ષમગલ- પ્રાપ્તાય અર્ઘ્યં

જયમાલા

આદિ ધર્મ કરતા પ્રભુ, આદિ બ્રહ્મ જગદીશ;
તીર્થ કર પદ જિહિ લયૌ, પ્રથમ નવાઊ શીશ.

નમો દેવ દેવેન્દ્ર તુમ ચર્ણ ધ્યાવૈ,
નમો દેવ ઇન્દ્રાદિ સેવક રહાવૈ;
નમો દેવ તુમકો તુમ્હી સુખદાતા,
નમો દેવ મેરી હરો દુખ અસાતા. (1)

તુમ્હી બ્રહ્મરૂપી સુબ્રહ્મા કહાવૌ,
તુમ્હી વિષ્ણુ સ્વામી ચરાચર લખાવો;
તુમ્હી દેવ જગદીશ સર્વજ્ઞ નામી,
તુમ્હી દેવ તીર્થેશ નામી અકામી. (2)

સુશકર તુમ્હી હો તુમ્હી સુખકારી,
સુજન્માદિ ત્રયપુર તુમ્હી હો વિદારી;
ધરૈં ધ્યાન જો જીવ જગકે મઝારી,
કરૈ નાસ વિધિકો લહૈ જ્ઞાન ભારી. (3)

સ્વયભૂ તુમ્હી હો મહાદેવ નામી,
મહેશ્વર તુમ્હી હો તુમ્હી લોકસ્વામી;
તુમ્હેં ધ્યાનમેં જો લખેં પુન્યવંતા,
વહી મુકિતકો રાજ વિલસૈં અનતા. (4)

તુમ્હી હો વિધાતા તુમ્હી નદદાતા,
નમૈ જો તુમ્હેં સો સદાનંદ પાતા;
હરો કર્મ કે ફંદ દુઃખકદ મેરે,
નિજાનદ દીજૈ નમો ચર્ણ તેરે (5)

મહા મોહકો મારી નિજ રાજ લીનૌ;
મહાજ્ઞાનકો ધારી શિવવાસ કીનૌ;
સુનો અર્જ મેરી રિષભદેવ સ્વામી,
મુજ વાસ નિજ પાસ દીજે સુધામી. (6)

નાભિરાય મરુદેવી સુત, સદા તુમ્હારી આસ;
મનવચકાય લગાયકે, નમેં જિનેશ્વરદાસ.

ॐ હ્રીં શ્રી આદિનાથ જિનેંદ્રાય મહાઅર્ઘં નિર્વપામીતિ સ્વાહા

વર્તમાન જિનરાય ભરત કે જાનિયે,
પચકલ્યાનક ધારી ગયે શિવ થાનિયે;
જો નર મનવચકાય પ્રભુ પૂજૈ સહી,
સો નર દિવસુખ પાય લહૈ અષ્ટમ મહી.
।। ઇત્યાશીર્વાદઃ । પુષ્પાંજલિ ક્ષિપેત્ ।।

✦ ✦ ✦ ✦ ✦

श्री महावीर पूजन

जो मोह माया मान मत्सर, मदन मर्दन वीर हैं,
जो विपुल विघ्नों बीच में भी, ध्यान धारण धीर हैं।
जो तरण-तारण भव-निवारण, भव - जलधि के तीर हैं,
वे वन्दनीय जिनेश, तीर्थंकर स्वय महावीर हैं।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र ! अत्र अवतर - अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ - तिष्ठ ठ ठ ।
ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव- भव वषट् ।

जिनके गुणों का स्तवन पावन करन अम्लान है,
मल-हरन निर्मल- करन भागीरथी नीर-समान है।
सतप्त - मानस शान्त हो जिनके गुणो के गान में,
वे वर्द्धमान महान जिन विचरें हमारे ध्यान में।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

लिपटे रहें विषधर तदपि - चन्दन विटप निर्विष रहें,
त्यो शान्त शीतल ही रहो-रिपु विघन कितने ही करें।
॥सन्तप्त॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय ससारतापविनाशनाय चदनम् निर्वपामीति स्वाहा ।

सुख-ज्ञान-दर्शन-वीर जिन अक्षत समान अखण्ड हैं,
हैं शान्त यद्यपि तदपि जो दिनकर समान प्रचण्ड हैं।
॥सन्तप्त॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षत निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रिभुवनजयी अविजित कुसुमसर सुभट मारन सूर हैं,
पर-गन्ध से विरहित तदपि निज-गन्ध से भरपूर हैं।
।।सन्तप्त ।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।

यदि भूख हो तो विविध व्यंजन मिष्ट इष्ट प्रतीत हो,
तुम क्षुधा - बाधा रहित जिन ! क्यों तुम्हे उनसे प्रीति हो ?
।।सन्तप्त।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।

युगपद् विशद् सकलार्थ झलकें नित्य केवलज्ञान मे,
त्रैलोक्य-दीपक वीर - जिन दीपक चढाऊ क्या तुम्हे।
।।सन्तप्त।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।

जो कर्म ईन्धन दहन पावक पुज पवन समान हैं,
जो हैं अमेय प्रमेय पूरण ज्ञेय ज्ञाता ज्ञान हैं।
।।सन्तप्त।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

सारा जगत फल भोगता नित पुण्य एव पाप का,
सब त्याग समरस निरत जिनवर सफ़ल जीवन आपका।
।। सन्तप्त।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ।

इस अर्घ्य का क्या मूल्य है अनर्घ्य पद के सामने ?
उस परम-पद को पा लिया हे पतितपावन आपने।
।।सन्तप्त।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक अर्घ्य

सित छठवीं आषाढ, माँ त्रिशला के गर्भ में,
अन्तिम गर्भावास, यही जान प्रणमूं प्रभो ।

ॐ ह्रीं श्री आषाढशुक्लषष्ठ्या गर्भमंगलमण्डिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा ।

तेरस दिन सित चैत, अन्तिम जन्म लियो प्रभू,
नृप सिद्धार्थ निकेत, इन्द्र आय उत्सव कियो ।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लदश्या जन्ममंगलमण्डिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा ।

दशमी मगसिर कृष्ण, वर्द्धमान दीक्षा धरी,
कर्म कालिमा नष्ट, करने आत्मरथी बने ।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्या तपोमंगलमण्डिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा ।

सित दशमी बैसाख, पायो केवलज्ञान जिन,
अष्ट द्रव्यमय अर्घ्य, प्रभुपद पूजा करे हम ।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्या ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा ।

कार्तिक मावस श्याम, पायो प्रभु निर्वाण तुम,
पावा तीरथधाम, दीपावली मनॉय हम ।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णअमावस्या मोक्षमंगलमण्डिताय श्री महावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.स्वाहा ।

जयमाला

यद्यपि युद्ध नहीं कियो, नाहिं रखे असि-तीर,
परम अहिसक आचरण, तदपि बने महावीर ।

हे मोह-महादलदलन वीर, दुद्धर - तप सयम धरण धीर,
तुम हो अनन्त आनन्दकन्द, तुम रहित सर्व जग दंद-फद ।

अघकरन करन-मन हरन-हार, सुखकरन हरन भवदुख अपार,
सिद्धार्थ तनय तन रहित देव,सुर -नर-किन्नर सब करत सेव।

मतिज्ञान रहित सन्मति जिनेश, तुम राग-द्वेष जीते अशेष ,
शुभ-अशुभ राग की आग त्याग, हो गये स्वय तुम वीतराग ।

षट् द्रव्य और उनके विशेष, तुम जानत हो प्रभुवर अशेष ,
सर्वज्ञ-वीतरागी जिनेश, जो तुम को पहिचाने विशेष ।

वे पहिचाने अपना स्वभाव, वे करे मोह-रिपु का अभाव ,
वे प्रगट करे निज-पर विवेक, वे ध्यावे निज शुद्धात्म एक ।

निज आतम मे ही रहे लीन, चारित्र-मोह को करें क्षीण ,
उनका हो जावे क्षीण राग, वे भी हो जावें वीतराग ।

निज आतम मे ही रहे लीन, चारित्र-मोह को करें क्षीण,
उनका हो जावे क्षीण राग, वे भी हो जावे वीतराग।

जो हुए आज तक अरीहत, सबने अपनाया यहीं पथ,
उपदेश दिया इस ही प्रकार, हो सबको मेरा नमस्कार ।

जो तुमको नहि जाने जिनेश, वे पावें भव-भ्रमण क्लेश,
वे माँगे तुमसे धन - समाज, वैभव पुत्रादिक राज - काज ।

जिनको तुम त्यागे तुच्छ जान, वे उन्हे मानते हैं महान,
उनमें ही निशदिन रहे लीन, वे पुण्य - पाप में ही प्रवीन ।

प्रभु पुण्य - पाप से पार आप, बिन पहिचाने पावें सताप,
सतापहरण सुखकरण सार, शुध्दात्मस्वरूपी समयसार ।

तुम समयसार हम समयसार, सम्पूर्ण आत्मा समयसार ,
जो पहिचानें अपना स्वरूप, वे हो जावें परमात्मरूप ।

उनके ना कोई रहे चाह, वे अपना लेवे मोक्ष राह ,
वे करें आत्मा को प्रसिद्ध, वे अल्पकाल मे होय सिद्ध ।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यंनिर्वपामीति स्वाहा ।

भूतकाल प्रभु आपका, वह मेरा वर्तमान,
वर्तमान जो आपका, वह भविष्य मम जान ।

(पुष्पाजलि क्षिपेत्)

छिद्रमय हो नाव डगमग चल रही मझधार मे ,
दुर्भाग्य से जो पड गई दुर्दैव के अधिकार मे,
तब शरण होगा कौन जब नाविक डुबा दे धार में,
संयोग सब अशरण शरण कोई नही संसार मे ।

महार्घ्य

मैं देव श्री अरहत पूजूँ, सिद्ध पूजूँ चाव सों,
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ, साधु पूजूँ भाव सों।
अर्हन्त भाषित बैन पूजूँ, द्वादशाग रची गनी,
पूजूँ दिगम्बर गुरुचरण, शिवहेत सब आशा हनी।
सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि, दयामय पूजूँ सदा,
जजि भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहि कदा।
त्रैलोक्य के कृत्रिम अकृत्रिम, चैत्य चैत्यालय जजूँ,
पचमेरु - नन्दीश्वर जिनालय, खचर सुर पूजित भजूँ।
कैलाश श्री सम्मेदगिरि, गिरनार मैं पूजूँ सदा,
चम्पापुरी पावापुरी पुनि, और तीरथ शर्मदा।
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ, बीस क्षेत्र विदेह के,
नामावली इक सहस वसु जय, होय पति शिव गेह के।
जल गधाक्षत पुष्पचरु, दीप धूप फल लाय,
सर्व पूज्य पद पूजहूँ, बहु विधि भक्ति बढाय।

ॐ ह्रीं श्री अर्हन्तसिद्धचार्योपाठ्यायसर्वसाधुभ्यो द्वादशागजिनवाणीभ्यो उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मीय, दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो, सम्यग्दर्शनज्ञान, चारित्रेभ्यो त्रिलोकसम्बन्धिकृत्रिमाकृत्रिम जिनचैत्यालयेभ्यो, पन्चमेरौ अशीति चैत्यालयेभ्यो नन्दीश्वर द्वीपस्थद्वीपचाशज्जिनालयेभ्यो श्री सम्मेदशिखर, गिरनारगिरी कैलाशगिरी, चम्पापुर, पावापुर आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो, अतिशयक्षेत्रेभ्यो सीमधरादि विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो ऋषभादिचतुर्बिंशति तीर्थंकरेभ्यो भगवज्जिन सहस्राष्ट नामेभ्येश्च अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शान्ति - पाठ

शांतिनाथ मुख शशि-उनहारी, शील-गुण-व्रत-सयमधारी,
लखन एक सौ आठ विराजै, निरखत नयन कमलदल लाजें।
पंचम चक्रवर्ति पद धारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी,
इन्द्र-नरेंद्र पूज्य जिन-नायक, नमो शाति-हित शाति विधायक।
दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा,
छत्र चमर भामडल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ।
शाति-जिनेश शाति सुखदाई, जगत् पूज्य पूजौं शिर नाई,
परम शाति दीजे हम सबको, पढैं तिन्हे पुनि चार संघ को ।

पूजैं जिन्हें मुकुट-हार-किरीट लाके,
इद्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके।
सो शातिनाथ वर-वश जगत् प्रदीप,
मेरे लिये करहि शान्ति सदा अनूप ।

सपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीन को औ यतिनायको को,
राजा-प्रजा-राष्ट्र-सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन शांति को दे।
होवै सारी प्रजा को, सुख बलयुत हो, धर्मधारी नरेशा,
होवे वर्षा समय पै, तिल भर न रहै, व्याधियों का अदेशा ।
होवे चोरी न जारी, सुसमय वरते, हो न दुष्काल मारी,
सारे ही देश धारैं जिनवर-वृष को, जो सदा सौख्यकारी ।

घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज,
शाति करो सब जगत मे, वृषभादिक जिनराज ।

शास्त्रो का हो, पठन सुखदा, लाभ सत्सगती का,
सद् वृत्तों का, सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभी का।
बोलूँ प्यारे, वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ,
तौलौं सेऊँ चरण जिनके, मोक्ष जौं लौं न पाऊँ।

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणो मे,
तबलौं लीन रहौं प्रभु, जबलौं पाया न मुक्ति-पद मैने।
अक्षर पद मात्रा से दूषित, जो कछु कहा गया मुझसे,
क्षमा करो प्रभुसो सब, करुणाकरिपुनि छुडाहु भव-दुख से।
हे जगबन्धु जिनेश्वर ! पाऊँ-तव चरण-शरण बलिहारी,
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी।

(नौ बार णमोकार मत्र का जाप करें)

(क्षमापन)

बिन जाने वा जान के रही टूट जो कोय,
तुम प्रसाद तैं परम गुरु, सो सब पूरन होय।
पूजन - विधि जानूँ नहीं, नहि जानूँ आह्वान,
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करहु भगवान।
मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव,
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव।

आलोचना पाठ

बंदौ पाँचों परम - गुरु, चौबीसो जिनराज,
करुँ शुद्ध आलोचना, शुद्धि करन के काज । (1)

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी,
तिनकी अब निवृत्ति काज, तुम सरण लही जिनराज। (2)

इक बे ते चउ इन्द्री वा, मनरहित सहित जे जीवा,
तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदइ ह्वै घात विचारी। (3)

समरंभ समारभ आरभ, मन वच तन कीने प्रारंभ,
कृत कारित मोदन करिकै, क्रोधादि चतुष्टय धरिकै। (4)

शत आठ जु इमि भेदनतै, अघ कीने परि छेदनतै,
तिनकी कहुं कोलो कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी। (5)

विपरीत एकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनयके,
वस होय घोर अघ कीने, बचतै नहि जाय कहीने । (6)

कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदयाकरि भीनी,
या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुँगति मधि दोष उपायो । (7)

हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, पर-वनितासो दृग जोरी,
आरंभ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो । (8)

सपरस रसना घ्रानको, चखु कान विषय-सेवनको,
बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने । (9)

फल पच उदबर खाये, मधु मांस मद्य चित चाहे,
नहि अष्ट मूलगुण धारी, विसनन सेये दुखकारी। (10)

दुइबीस अभख जिन खाये, सो भी निस दिन भुंजाये,
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यो त्यो करि उदर भरायो। (11)

अनतानु जु बधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो,
सज्वलन चौकरी गुनिये, सब भेद जु षोडश सुनिये। (12)

परिहास अरति रति शोग, भय ग्लानि तिवेद संयोग,
पनवीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम। (13)

निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई,
फिर जागि विषय-बन धायो, नानाविध विष-फल खायो। (14)

आहार विहार निहारा, इनमे नहि जतन विचारा,
बिन देखी धरी उठाई, बिन शोधी वस्तु जु खाई। (15)

तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकलप उपजायो,
कछु सुधि बुधि नाहि रही है, मिथ्या मति छाय गयी है। (16)

मरजादा तुम ढिग लीनी, ताहूँ मे दोष जु कीनी,
भिन्न भिन्न अब कैसे कहिये, तुम ज्ञानविषै सब पइये। (17)

हा हा ! मै दुठ अपराधी, त्रस - जीवन - राशि विराधी,
थावर की जतन न कीनी, उरमे करुणा नहि लीनी । (18)

पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जांगा चिनाई,
बिन गाल्यो पुनि जल ढोल्यो, पंखातैं पवन विलोल्यो। (19)

हा हा ! मै अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विदारी,
तामधि जीवनके खंदा, हम खाये धरि आनंदा। (20)

हा हा ! परमाद बसाई, बिन देखे अगनि जलाई,
तामधि जे जीव जु आये, ते हू परलोक सिधाये। (21)

बीध्यो अन राति पिसायो, ईधन बिन सोधि जलायो,
झाडू ले जाँगा बुहारी, चिवटी आदिक जीव बिदारी । (22)

जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी,
नहि जल-थानक पहुँचाई, किरिया बिन पाप उपाई । (23)

जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि-कुल बहु घात करायो,
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये । (24)

अन्नादिक शोध कराई, तामै जु जीव निसराई,
तिनका नहीं जतन कराया, गलियारैं धूप डराया । (25)

पुनि द्रव्य कमावन काज, बहु आरंभ हिंसा साज,
किये तिसनावश अघ भारी, करुना नहिं रंच विचारी । (26)

इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवता,
संतति चिरकाल उपाई, वानी तै कहिय न जाई । (27)

ताको जो उदय अब आयो, नानाविध मोहि सतायो,
फल भुंजत जिय दुख पावै, बचतै कैसे करि गावै। (28)

तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी,
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है । (29)

जो गांवपती इक होवे, सो भी दुखिया दुख खोवै,
तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेट्हु अंतरजामी । (30)

द्रौपदीको चीर बढायो, सीता प्रति कमल रचायो,
अजन से किये अकामी, दुख मेट्यो अंतरजामी। (31)

मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपनो विरद सम्हारो,
सब दोषरहित करि स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी। (32)

इंद्रादिक पद नहि चाहूँ, विषयनि में नाहि लुभाऊँ,
रागादिक दोष हरीजै, परमातम निज-पद दीजै। (33)

दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो मोय,
सब जीवन के सुख बढे, आनंद मगल होय। (34)

अनुभव माणिक पारखी, 'जौहरी' आप जिनंद,
ये ही वर मोहि दीजिये, चरण शरन आनन्द। (35)

समाधिमरण पाठ

वन्दौ श्री अरंहत परमगुरु, जो सबको सुखदाई,
इस जग मे दु:ख जो मै भुगते, सो तुम जानो राई,
अब मैं अरज करूँ प्रभु तुमसे, कर समाधि उर माही,
अन्त समय मे यह वर मांगूँ, सो दीजे जग राई। (1)

भव-भव मे तन धार नये मै, भव-भव शुभ सग पायो,
भव-भव में नृप रिद्धि लई मै, मात पिता सुत थायो,
भव-भव मे तन पुरुष-तनो धर, नारी हूँ तन लीनो,
भव-भव मे मै भयो नपुंसक, आतमगुण नही चीनो। (2)

भव-भव मे सुरपदवी पाई, ताके सुख अति भोगे,
भव-भव मे गति नरकतनी धर, दु:ख पाये विधि योगे,
भव-भव मे तिर्यंच योनि धर, पायो दु:ख अति भारी,
भव-भव मे साधर्मी जन को, संग मिल्यो हितकारी। (3)

भव-भव मे जिनपूजन कीनी, दान सुपात्रहिं दीनो,
भव-भव मे मै समवसरण मे, देख्यो जिनगुण भीनो,
एती वस्तु मिली भव-भव मे, सम्यकगुण नहि पायो,
ना समाधियुत मरण कियो मै, तातै जग भरमायो। (4)

काल अनादि भयो जग भ्रमतै, सदा कुमरणहि कीनो,
एकबार हूँ सम्यकयुत मै, निज आतम नहि चीनो,
जो निजपरको ज्ञान होय तो, मरण समय दु:ख काँई,
देह विनासी मै निजभासी, शाति स्वरुप सदाई। (5)

विषयकषायन के वश होकर, देह आपनो जान्यो,
कर मिथ्या सरधान हिये विच, आतम नाहि पिछान्यो,
यो कलेश हिय धार मरणकर, चारो गति भरमायो,
सम्यकदर्शन - ज्ञान - चरन ये, हिरदे मे नहि लायो। (6)

अब या अरज करुँ प्रभु सुनिये, मरण समय यह मागो,
रोग जनित पीडा मत होवो, अरु कषाय मत जागो,
ये मुझ मरणसमय दु खदाता, इन हर साता कीनै,
जो समाधियुत मरण होय मुझ, अरु मिथ्यामद छीजे। (7)

यह तन सात कुधातमई है, देखत ही घिन आवै,
चर्म लपेटी ऊपर सोंहै, भीतर विष्टा पावै,
अतिदुर्गन्ध अपावनसो यह, मूरख प्रीति बढावै,
देह विनासी, जिय अविनासी नित्यस्वरुप कहावै। (8)

यह तन जीर्ण कुटीसम आतम, यातै प्रीति न कीजै,
नूतन महल मिलै जब भाई, तब यामै क्या छीजै,
मृत्यु होन से हानि कौन है, याको भय मत लावो,
समता से जो देह तजोगे, तो शुभ तन तुम पावो। (9)

मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, इस अवसर के मांही,
जीरन तन से देत नयो यह, या सम साहू नाही,
या सेती इस मृत्यु समय पर, उत्सव अति ही कीजै,
क्लेशभाव को त्याग सयाने समताभाव धरीजै। (10)

जो तुम पूरब पुण्य किये है, तिनको फल सुखदाई,
मृत्यु मित्र बिन कौन दिखावै, स्वर्ग सम्पदा भाई,
राग द्वेष को छोड़ सयाने, सात व्यसन दुःखदाई,
अन्त समय मे समता धारो, परभव पन्थ सहाई। (11)

कर्म महादुठ बैरी मेरो, तासेती दु:ख पावै,
तन पिंजर मे बन्द कियो मोहि, यासो कौन छुडावै,
भूख तृषा दु:ख आदि अनेकन, इस ही तन मे गाढै,
मृत्युराज अब आय दयाकर, तनपिंजरसे काढै। (12)

नाना वस्त्राभूषण मैने, इस तनको पहराये,
गन्ध सुगन्धित अतर लगाये, षठरस असन कराये,
रात दिना मै दास होयकर, सेव करी तनकेरी,
सो तन मेरे काम न आयो, भूल रह्यो निधि मेरी। (13)

मृत्युराय को शरन पाय तन, नूतन ऐसो पाऊँ,
जामै सम्यकरतन तीन लहि आठो कर्म खपाऊँ,
देखो तन सम और कृतघ्नी, नाहि सु या जगमाहि,
मृत्यु समय मे ये ही परिजन, सब ही है दु:खदाई। (14)

यह सब मोह बढावन हारे, जियको दुर्गतिदाता,
इनसे ममत निवारो जियरा, जो चाहो सुख साता,
मृत्यु कल्पद्रुम पाय सयाने, मांगो इच्छा जेती,
समता धरकर मृत्यु करो, तो पावो सपति तेती। (15)

चौ आराधन सहित प्राण तज, तौ ये पदवी पावो,
हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर, स्वर्ग मुक्ति मे जावो,
मृत्यु कल्पद्रुम सम नहि दाता, तीनों लोक मझारै,
ताको पाय कलेश करो मत, जन्म जवाहर हारै। (16)

इस तनमें क्या राचै जियरा, दिन-दिन जीरन हो है,
तेजकांति बल नित्य घटत है, या सम अथिर सु को है,
पांचो इन्द्री शिथिल भई अब, स्वास शुद्ध नहि आवै,
तापर भी ममता नहि छोडे, समता उर नहिं लावै। (17)

मृत्युराज उपकारी जियको, तनसो तोहि छुडावै,
नातर या तनबन्दीग्रह में, पर्‌यो - पर्‌यो बिललावै,
पुद्‌गल के परमाणु मिलकर पिण्डरुप तन भासी,
याही मूरत मै अमूरती, ज्ञान ज्योति गुणखासी। (18)

रोग-शोक आदिक जो वेदन, ते सब पुद्‌गल लारै,
मै तो चेतन व्याधि बिना नित, है सो भाव हमारे,
या तनसो इस क्षेत्र सम्बन्धी, कारण आन बन्यो है,
खान पान दे याको पोष्यो अब सम भाव ठन्यो है। (19)

मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान बिन, यह तन अपनो जान्यो,
इन्द्रीभोग गिने सुख मैने, आपो नाहि पिछान्यो,
तन विनशनतै नाश जानि निज, यह अयान दु·खदाई,
कुटुम्ब आदि को अपनो जान्यो, भूल अनादी छाई। (20)

अब निज भेद जथारथ समझ्यो, मै हूँ ज्योतिस्वरुपी,
उपजै विनसै सो यह पुद्‌गल, जान्यो याको रूपी,
इष्टऽनिष्ट जेते सुख दु ख है, सो सब पुद्‌गल सागै,
मै जब अपनो रुप विचांरो, तब वे सब दु ख भागैं। (21)

बिन समता तनऽनत धरे मै, तिन मे ये दु·ख पायो,
शस्त्रघाततैऽनन्त बार मर, नाना योनि भ्रमायो,
बार अनन्तहि अग्नि माहि जर, मूवो सुमति न लायो,
सिह व्याघ्र अहिऽनन्त बार मुझ, नाना दुःख दिखायो। (22)

बिन समाधि ये दु ख लहे मै, अब उर समता आई,
मृत्युराजको भय नहि मानो, देवै तन सुखदाई,
यातै जब लग मृत्यु न आवै तब लग जप तप कीजै,
जप तप बिन इस जग के माही, कोई कभी ना सीजै। (23)

स्वर्ग सम्पदा तपसो पावै, तपसो कर्म नसावै,
तपही सो शिवकामिनिपति ह्वै, यासो तप चित लावै,
अब मैं जानी समता बिन मुझ, कोऊ नाहि सहाई,
मात पिता सुत बांधव तिरिया, ये सब है दुःखदाई। (24)

मृत्यु समय मे मोह करे ये, तातै आरत हो है,
आरततैं गति नीची पावै, यो लख मोह तज्यो है,
और परीग्रह जेते जग मे, तिनसो प्रीत न कीजे,
परभव मे ये संग न चाले नाहक आरत कीजे। (25)

जे-जे वस्तु लखत है ते पर, तिनसो नेह निवारो,
परगति मे ये साथ न चालै, ऐसो भाव विचारो,
जो परभवमे संग चले तुझ, तिनसो प्रीत सु कीजै,
पंच पाप तज समता धारो, दान चार विध दीजै। (26)

दशलक्षणमय धर्म धरो उर, अनुकम्पा उर लावो,
षोडशकारण नित्य विचारो, द्वादश भावन भावो,
चारो परवी प्रोषध कीजै, अशन रात को त्यागो,
समता धर दुरभाव निवारो, संयमसो अनुरागो। (27)

अन्त समय मे यह शुभ भावहि, होवै आनि सहाई,
स्वर्ग मोक्षफल तोहि दिखावे, ॠद्धि देहि अधिकाई,
खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उर मे समता लाकैं,
जा सेती गतिचार दूर कर, बसहु मोक्षपुर जाकै। (28)

मन थिरता करकै तुम चिंतो, चौ आराधन भाई,
ये ही तोको सुखकी दाता, और हितू कोउ नाही,
आगे बहु मुनिराज भये है, तिन गहि थिरता भारी,
बहु उपसर्ग सहे शुभ पावन, आराधन उरधारी। (29)

तिनमे कछु इक नाम कहुँ मै, सो सुन जिय चित्त लाकै,
भावसहित अनुमोदे तासो, दुर्गति होय न ताकै,
अरु समता निज उरमे आवै, भाव अधीरज जावै,
यो निश दिन जो उन मुनिवरको, ध्यान हिये विचलावै। (30)

धन्य - धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसे धीरज धारी,
एक श्यालनि जुग बच्चाजुत, पांव भख्यो दु:खकारी,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (31)

धन्य-धन्य जु सुकौशल स्वामी, व्याघ्रीने तन खायो,
तो भी श्रीमुनि नेक डिगे नही, आतम सो हितलायो,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (32)

देखो गजमुनिके शिर ऊपर, विप्र अगिनि बहु बारी,
शीश जलै जिम लकडी तिनको, तौ भी नाहि चिंगारी,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (33)

सनतकुमार मुनि के तन मे, कुष्ट वेदना व्यापी,
छिन्न-भिन्न तन तासो हूवो, तब चिन्त्यो गुण आपी,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (34)

श्रेणिक सुत गगा मे डूब्यो, तब जिननाम चितार्‌यो,
धर सलेखना परिग्रह छोड्‌यो, शुद्ध भाव उर धार्‌यो,
यह उपसर्ग सह्‌यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (35)

समतभद्र मुनिवर के तन मे क्षुधा वेदना आई,
तो दुःख मे मुनि नेक न डिगियो चिन्त्यौ निजगुण भाई,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (36)

ललित घटादिक तीस दोय मुनि, कौशांबी तट जानो,
नदी में मुनि बहकर मूवे, सो दुःख उन नहिं मानो,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (37)

धर्मघोष मुनि चम्पानगरी, बाह्य ध्यान धर ठाड़ो,
एक मास की कर मर्यादा, तृषा दु.ख सह गाढो,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (38)

श्रीदत्तमुनिको पूर्वजन्म को, बैरी देव सु आके,
विक्रिय कर दु.ख शीततनो सो, सह्यो साध मन लाके,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (39)

वृषभसेन मुनि उष्ण शिलापर, ध्यान धर्‌यो मनलाई,
सूर्यधाम अरु उष्ण पवन की, वेदन सहि अधिकाई,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु:ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (40)

अभयघोषमुनि काकन्दीपुर, महावेदना पाई,
वैरी चण्डने सब तन छेद्यो, दुःख दीनो अधिकाई,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु.ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (41)

विद्युतचरने बहु दु·ख पायो, तो भी धीर न त्यागी,
शुभभावनसो प्राण तजे निज, धन्य और बडभागी,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु·ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (42)

पुत्र चिलाती नामा मुनिको, बैरी ने तन घाता,
मोटे-मोटे कीट पडे तन, तापर निज गुण राता,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (43)

दण्डकनामा मुनिकी देही, बाणन कर अरि भेदी,
तापर नेक डिगे नहि वे मुनि, कर्म महारिपु छेदी,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (44)

अभिनन्दन मुनि आदि पांचसौ, घानी पेलि जु मारे,
तो भी श्रीमुनि समताधारी, पूरबकर्म विचारे,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (45)

चाणक मुनि गौधर के माही, मून्द अगिनि परजाल्यो,
श्रीगुरु उर समभाव धारकै, अपनो रुप सम्हाल्यो,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (46)

सातशतक मुनिवर दु ख पायो, हथनापुर मे जानो,
बलि ब्राह्मणकृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहि मानो,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (47)

लोहमयी आभूषण धडके, ताते कर पहराये,
पांचों पांडव मुनिके तन में, तौ भी नाहिं चिगाये,
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दु:ख है? मृत्यु महोत्सव भारी। (48)

और अनेक भये इस जग मे, समता - रस के स्वादी,
वे ही हमकों हों सुखदाता, हरिहै टेव प्रमादी,
सम्यकदशर्न ज्ञान चरन तप, ये आराधन चारो,
ये ही मोको सुखकी दाता, इन्हे सदा उर धारों। (4९)

यो समाधि उरमाही लावो, अपनो हित जो चाहो,
तज ममता अरु आठों मदको ज्योतिस्वरुपी ध्यावो,
जो कोई नित करत पयानो, ग्रामांतरके काजे,
सो भी शकुन विचारै नीके, शुभके कारण साजे। (50)

मात पितादिक सर्व कुटुम सब, नीके शकुन बनावै,
हलदी धनिया पुंगी अक्षत, दूब दही फल लावै,
एक ग्राम जाने के कारण, करे शुभाशुभ सारे,
जब परगतिको करत पयानो, तब नहि सोचों प्यारे। (51)

सर्वकुटुम्ब जब रोबन लागै, तोहि रुलावै सारे,
ये अपशकुन करै सुन तोको, तू यो क्यो न विचारै,
अब परगतिको चालत बिरियाँ, धर्मध्यान उर आनो,
चारो आराधन आराधो, मोहतनो दु ख हानो। (52)

होय नि:शल्य तजो सबदुविधा, आतम राम सुध्यावो,
जब परगति को करहु पयानो, परम तत्त्व उर लावो,
मोहजाल को काट पियारे, अपनो रुप विचारो,
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, यो निश्चय उर धारो। (53)

मृत्यु महोत्सव पाठकों, पढो सुनो बुधिवान,
सरधा धर नित सुख लहो, 'सूरचन्द' शिवथान,
पंच उभय नव एक नभ, सम्बत् सो सुखदाय,
आश्विन श्यामा सप्तमी, कह्यो पाठ मन लाय। (54)

श्री सिद्ध स्तुति

अविनाशी अविकार परम - रस - धाम हो,
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो।
शुद्धबुद्ध अविरुद्ध अनादि अनंत हो,
जगत - शिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो।

ध्यान अग्निकर कर्म कलंक सबै दहे,
नित्य निरजन देव स्वरूपी हवै रहे।
ज्ञायक के आकार ममत्व निवारकै,
सो परमातम सिद्ध नमूँ सिर नायकै ।

अविचल ज्ञान प्रकाशते, गुण अनन्त की खान,
ध्यान धरै सो पाइए, परम सिद्ध भगवान।

अविनाशी आनन्द मय, गुण पूरण भगवान,
शक्ति हिये परमात्मा, सकल पदारथ ज्ञान।

◆ ◆ ◆ ◆ ◆

समाधिमरण स्वरुप

हे भव्य ! तू सुन । अब समाधिमरण का लक्षण वर्णन किया जाता है। **"समाधि"** नाम नि·कषाय का है, शान्त परिणामों का है, कषाय रहित शांत परिणामो से मरण होना **समाधिमरण** है। संक्षिप्त रुप से समाधिमरण का यही वर्णन है। विशेष रुप से कथन आगे किया जा रहा है।

सम्यक्ज्ञानी पुरुष का यह सहज स्वभाव ही है कि वह समाधिमरण ही की इच्छा करता है, उसकी हमेशा यही भावना रहती है, अन्त मे मरण समय निकट आने पर वह इस प्रकार सावधान होता है कि जिस प्रकार वह सोया हुआ सिह सावधान होता है जिसको कोई पुरुष ललकारे कि हे सिह । तुम्हारे पर बैरियों की फौज्ञ आक्रमण कर रही है, तुम पुरुषार्थ करो और गुफा से बाहर निकलो। जब तक बैरियो का समूह दूर है तब तक तुम तैयार हो जाओ बैरियों की फौज को जीत लो। महान् पुरुषों की यही रीति है कि **वे शत्रु के जागृत होने से पहले तैयार होते हैं।**

उस पुरुष के ऐसे वचन सुनकर शार्दूल तत्क्षण ही उठा और उसने ऐसी गर्जना की कि मानो आषाढ मास में इन्द्र ने ही गर्जना की हो । सिह की गर्जना सुनकर बैरियों की फौज में जो हाथी, घोडे आदि थे वे सब कंपायमान हो गये और वे सिह को जीतने में समर्थ नही हुए। हाथियों ने आगे

कदम रखना बन्द कर दिया उनके हृदय में सिह के आकार की छाप पड गई   है इसलिये वे धैर्य नही धारण कर रहे, क्षण-क्षण मे निहार करते है, उनसे सिंह के पराक्रम का मुकाबला नही किया जा सकता। (इस उदाहरण को अब सम्यक्ज्ञानी की अपेक्षा से बताते है) सम्यक्ज्ञानी पुरुष तो शार्दूलसिह और अष्टकर्म बैरी है सम्यक्ज्ञानी रुपी सिंह मरण के समय इन अष्टकर्मरुपी बैरियों को जीतने के लिए विशेष रुप से उद्यम करता है।

मृत्यु को निकट जानकर सम्यक्ज्ञानी पुरुष सिह की तरह सावधान होता है और कायरपने को दूर ही से छोड देता है।

अजुली - जल सम जवानी क्षीण होती जा रही,
प्रत्येक पल जर्जर जरा नजदीक आती जा रही,
काल की काली घटा प्रत्येक क्षण मँडरा रही,
किन्तु पल-पल विषय-तृष्णा तरुण होती जा रही।

समाधि-भावना

दिन रात मेरे स्वामी, मै भावना ये भाऊँ,
देहान्त के समय मे, तुमको न भूल जाऊँ,
शत्रु अगर कोई हो, सन्तुष्ट उनको कर दूँ,
समता का भाव धर कर, सबसे क्षमा कराऊं। (1)

त्यागूँ अहार पानी, औषध विचार अवसर,
टूटे नियम न कोई, दृढता हृदय मे लाऊँ। (2)

जागे नही कषायें, नहिं वेदना सतावे,
तुमसे ही लौ लगी हो, दुरध्यान को भगाऊं। (3)

आतम स्वरुप अथवा, आराधना विचारुँ,
अरहन्त सिद्ध साधू, रटना यही लगाऊं। (4)

धरमातमा निकट हो, चरचा धरम सुनावें,
वो सावधान रक्खे, गाफिल न होने पाऊं। (5)

जीने की हो न वाँछा, मरने की हो न ख्वाइश,
परिवार मित्र जन से, मै मोह को हटाऊं। (6)

भोगे जो भोग पहिले, उनका न होवे सुमरन,
मै राज्य सम्पदा या, पद इन्द्र का न चाहूँ। (7)

रत्नत्रय का पालन, हो अन्त मे समाधी,
'शिवराम' प्रार्थना यह, जीवन सफल बनाऊँ। (8)

સામાયિક - પાઠ

સૌ પ્રાણી આ સસારનાં, સન્મિત્ર મુજ વહાલા થજો,
સદ્‌ગુણમા આનંદ માનું, મિત્ર કે વેરી હજો;
દુઃખીયા પ્રતિ કરુણા અને, દુશ્મન પ્રતિ મધ્યસ્થતા,
શુભ ભાવના પ્રભુ ચાર આ,પામો હૃદયમાં સ્થિરતા. (1)

અતિ જ્ઞાનવત અનત શકિત, દોષહીન આ આત્મ છે,
એ મ્યાનથી તરવાર પેઠે, શરીરથી વિભિન્ન છે ;
હું શરીરથી જૂદો ગણુ એ જ્ઞાનબળ મુજને મળો,
ને ભીષણ જે અજ્ઞાન મારુ, નાથ ! તે સત્વર ટળો. (2)

સુખદુઃખમા અરિમિત્રમા, સયોગ કે વિયોગમા,
રખડુ વને વા રાજભુવને, રાચતો સુખ ભોગમા ;
મમ સર્વકાળે સર્વજીવમા; આત્મવત્ બુદ્ધિબધી,
તુ આપજે મુજ મોહ કાપી, આ દશા કરુણાનિધિ ! (3)

તુજ ચરણકમળનો દીવડો, રૂડો હૃદયમા રાખજો,
અજ્ઞાનમય અધકારના, આવાસને તમે બાળજો;
તદ્‌રૂપ થઇ એ દિવડો, હું સ્થિર થઇ ચિત્ત બાધતો,
તુજ ચરણયુગ્મની રજમહીં હુ પ્રેમથી નિત્ય ડૂબતો. (4)

પ્રમાદથી પ્રયાણ કરીને, વિચરતા પ્રભુ ! અહીં તહી,
એકેન્દ્રિયાદિ જીવને, હણતાં કદી ડરતો નહીં ;
છેદી વિભેદી દુઃખ દઇ મેં ત્રાસ આપ્યો તેમને,
કરજો ક્ષમા મુજ કર્મ હિસક, નાથ ! વિનવુ આપને. (5)

કષાયને પરવશ થઇ બહુ, વિષયસુખ મેં, ભોગવ્યા,
ચારિત્રના જે ભંગ વિભુ ! મુક્તિ-પ્રતિકૂળ થઇ ગયા;
કુબુદ્ધિથી અનિષ્ટ કિંચિત્, આચરણ મેં આદર્યું,
કરજો ક્ષમા સૌ પાપ તે, મુજ રંકનું જે જે થયું. (6)

મન વચન કાય કષાયથી કીધાં પ્રભુ ! મેં પાપ બહુ,
સસારનાં દુઃખ - બીજ સૌ, વાવ્યા અરે ! હું શુ કરૂ ;
તે પાપને આલોચના, નિંદા અને ધિક્કારથી,
હું ભસ્મ કરતો, મન્ત્રથી, જેમ વિષ જાતું વાદીથી (7)

મુજ બુદ્ધિના વિકારથી, કે સંયમના અભાવથી,
બહુ દુષ્ટ દુરાચાર મેં સેવ્યા પ્રભુ ! કુબુદ્ધિથી;
કરવુ હતું તે ના કર્યું, પ્રમાદ કેરા જોરથી,
સૌ દોષ મુક્તિ પામવા, માગુ ક્ષમા હુ હ્રદયથી. (8)

મુજ મલિન મન જો થાય તો, તે દોષ અતિક્રમ જાણતો,
વળી સદાચારે ભંગ બનતાં, દોષ વ્યતિક્રમ માનતો ;
અતિચારી તે તો જાણવો, જે વિષય - સુખમાં મ્હાલતો,
અતિ વિષયસુખ - આસક્તને, હુ અનાચારી ધારતો. (9)

મુજ વચન વાણી ઉચ્ચારમાં, તલભાર વિનિમય થાય તો,
જો અર્થ માત્રા પદ મહીં, લવલેશ વધઘટ થાય તો ;
યથાર્થ વાણી ભગનો, દોષિત પ્રભુ ! હુ આપનો,
આપી ક્ષમા મુજને બનાવો, પાત્ર કેવળ બોધનો. (10)

પ્રભુવાણી ! તું મંગલમયી, મુજ શારદા હુ સમજતો,
વળી ઇષ્ટ વસ્તુ દાનમા, ચિંતામણિ હું ધારતો;
સુબોધ ને પરિણામશુદ્ધિ, સયમને વરસાવતી,
ગીત સુણાવી સ્વર્ગના, તુ મોક્ષલક્ષ્મી અર્પતી (11)

સ્મરણ કરે યોગીજનો, જેનુ ઘણા સન્માનથી,
વળી ઈંદ્ર નર ને દેવ પણ, સ્તુતિ કરે જેની અતિ ;
એ વેદ ને પુરાણ જેના, ગાય ગીતો હર્ષમા,
તે દેવના પણ દેવ વ્હાલા, સિદ્ધ વસજો હૃદયમા. (12)

જેનુ સ્વરૂપ સમજાય છે, સદ્‌જ્ઞાન-દર્શન-યોગથી,
ભડાર છે આનદના જે, અચળ છે વિકારથી ;
પરમાત્મની સજ્ઞા થકી, ઓળખાય જે શુભધ્યાનમા,
તે દેવના પણ દેવ વ્હાલા, સિદ્ધ વસજો હૃદયમા. (13)

જે કઠિન કષ્ટો કાપતા, ક્ષણવારમા સસારનાં,
નિહાળતાં જે સૃષ્ટિને જેમ બોરને નિજ હસ્તમા;
યોગીજનો ને ભાસતા જે સમજતા સૌ વાતમા,
તે દેવના પણ દેવ વ્હાલા, સિદ્ધ વસજો હૃદયમા. (14)

જન્મો મરણના દુઃખને, નહી જાણતા કદી જે પ્રભુ,
જે મોક્ષપથ દાતાર છે, ત્રિલોકને જોતા વિભુ ,
કલકહિન દિવ્યરૂપ જે, રહેતું નથી પણ ચંદ્રમા,
તે દેવના પણ દેવ વ્હાલા, સિદ્ધ વસજો હૃદયમા (15)

આ વિશ્વના સૌ પ્રાણી પર, શુદ્ધ પ્રેમ નિસ્પૃહ રાખતા,
નહિ રાગ કે નહિ દ્વેષ જેને, અસંગભાવે વર્તતા ;
વિશુદ્ધ ઇન્દ્રિયશૂન્ય જેવા, જ્ઞાનમય છે રૂપમા,
તે દેવના પણ દેવ વ્હાલા, સિદ્ધ વસજો હૃદયમા (16)

ત્રિલોકમા વ્યાપી રહ્યા છે, સિદ્ધિ ને વિબુદ્ધિ જે,
નહિ કર્મ કેરા બધ જેને, ધૂર્ત સમ ધૂતી શકે;
વિકાર સૌ સળગી જતા, મન મસ્ત થાતાં ધ્યાનમા,
તે દેવના પણ દેવ વ્હાલા, સિદ્ધ વસજો હૃદયમા. (17)

તિમિર કેરો સ્પર્શ તલભર, થાય નહિ જેમ સૂર્યને,
તેમ દુષ્કલંકો કર્મના, અડકી શકે નહિ આપને;
જે એક ને બહુરૂપ થઇ, વ્યાપી બધે વિરાજતો,
તેવા સુદેવ સમર્થનુ, સાચું શરણ હું માંગતો. (18)

રવિતેજ વિણ પ્રકાશ જે, ત્રણ ભુવનને અજવાળતો,
તે જ્ઞાનદીપ-પ્રકાશ તારા, આત્મામાં શુ દીપતો!
જે દેવ મંગળ બોધ મીઠા, મનુજને નિત્ય આપતો,
તેવા સુદેવ સમર્થનું, સાચુ શરણ હું માગતો. (19)

જો થાય દર્શન સિદ્ધનાં, વિશ્વદર્શન થાય છે,
જેમ સૂર્યના દીવા થકી, સૌ સ્પષ્ટત દેખાય છે;
અનત અનાદિ દેવ જે, અજ્ઞાન-તિમિર ટાળતો,
તેવા સુદેવ સમર્થનુ, સાચુ શરણ હું માગતો. (20)

જેણે હણ્યા નિજ બળ વડે, મન્મથ અને વળી માનને,
જેણે હણ્યા આ લોકના, ભય શોક ચિતા મોહને;
વિષાદ ને નિદ્રા હણ્યા, જયમ અગ્નિ વૃક્ષો બાળતો,
તેવા સુદેવ સમર્થનુ, સાચુ શરણ હું માગતો. (21)

હું માગતો નથી કોઇ આસન, દર્ભ પત્થર કાષ્ટનું,
મુજ આત્મના નિર્વાણ કાજે, યોગ્ય આસન આત્મનુ;
આ આત્મ જો વિશુદ્ધ ને, કષાય-દુષ્મન વિણ જો,
અમૂલ્ય આસન થાય છે, શુભ સાધવા સમાધિ તો. (22)

મેળા બધા મુજ સંઘના, નહિ લોકપૂજા કામની,
જગ બાહ્યની નહિ એક વસ્તુ, કામની મુજ ધ્યાનની;
સંસારની સૌ વાસનાને, છોડ વ્હાલા વેગથી,
અધ્યાત્મમા આનદ લેવા, યોગ્યબળ લે હોંશથી. (23)

આ જગતની કો વસ્તુમા તો સ્વાર્થ છે નહિ મુજ જરી,
વળી જગતની પણ વસ્તુઓનો, સ્વાર્થ મુજ માં છે નહીં;
આ તત્વને સમજી ભલા તુ બાહ્યનો મોહ છોડજે,
શુભ મોક્ષના ફળ ચાખવા, નિજ આત્મમા તુ સ્થિર થજે. (24)

જ્ઞાનમય વિશુદ્ધ આત્મ, સ્વ-આત્મથી જોવાય છે,
શુભ યોગમા સાધુ સકળને, આ અનુભવ થાયછે;
નિજ આત્મમા એકાગ્રતા, સ્થિરતા વળી નિજ આત્મમા,
અખડ સુખને સાધવા તુ, આત્મથી જો આત્મમા. (25)

આ આત્મ મારો એક ને, શાશ્વત નિરતર રૂપ છે,
વિશુદ્ધ નિજ સ્વભાવમા, રમી રહ્યો છે નિત્ય તે ;
વિશ્વની સૌ વસ્તુનો, નિજ કર્મ ઉદ્ભવ થાય છે,
નિજ કર્મથી વળી વસ્તુનો, વિના શ વિનિમય થાય છે. (26)

જે આત્મ જોડે એકતા, આવી નહીં આ દેહની,
તે એકતા શુ આવશે, સ્ત્રી, પુત્ર, મિત્રો સાથની ?
જો થાય જૂદી ચામડી, આ શરીરથી ઉતારતા,
તો રોમ સુદર દેહ પર, પામે પછી શુ સ્થિરતા ? (27)

આ વિશ્વની કો વસ્તુમા, જો સ્નેહ બંધન થાય છે,
તો જન્મમરણના ચક્રમા, ચેતન વધુ ભટકાય છે;
મુજ મન વચન ને કાયનો, સયોગ પરનો છોડવો,
શુભ મોક્ષના અભિલાષનો, આ માર્ગ સાચો જાણવો. (28)

સસારરૂપી સાગરે જે અવનતિમાં લઈ જતી,
તે વાસનાની જાળ પ્યારા, તોડ સયમજોરથી;
વળી બાહ્યથી છે આત્મ જૂદો, ભેદ મોટો જાણવો,
તલ્લીન થઈ ભગવાનમા, ભવપથ વિકટ કાપવો. (29)

કર્મો કર્યાં જે આપણે, ભૂતકાળમાં જન્મો લઇ,
તે કર્મનું ફળ ભોગવ્યા વિણ , માર્ગ એકે છે નહિ;
પરનું કરેલું કર્મ જો, પરિણામ આપે મુજને,
તો મુજ કરેલાં કર્મનો, સમજાય નહિ કઇ અર્થને. (30)

સસારના સૌ પ્રાણીઓ, ફળ ભોગવે નિજ કર્મનું,
નિજ કર્મના પરિપાકનો ભોક્તા, નહિ કો આપણુ;
લઇ શકે છે અન્ય તેને, છોડ એ ભ્રમણા બૂરી,
પ્રભુ-ધ્યાનમા નિમગ્ન થા, તુજ આત્મનો આશ્રય કરી. (31)

શ્રી અમિતગતિ અગમ્ય પ્રભુજી ! ગુણ અસીમ છે આપના,
હૃદયથી આ દાસ તારો, ગુણ ગાય તુજ સામર્થ્યના;
પ્રગટતા જે ગુણ બધા, મુજ આત્મમા સદ્ભાવથી,
શુભ મોક્ષને વરવા પછી, પ્રભુ ! વાર કયાંથી લાગતી ? (32)

બત્રીશ ચરણનુ આ બન્યુ, મગળ સુદર કાવ્ય;
અનુભવતાં એક ધ્યાનથી, મોક્ષગતિ જીવ જાય. (33)

રત્નાકર પચ્ચીશી

મદિર છો મુકિતતણા, માંગલ્ય ક્રીડાના પ્રભુ!
ને ઇન્દ્ર નર ને દેવતા, સેવા કરે તારી વિભુ!
સર્વજ્ઞ ! સર્વ અતિશયોની પ્રધાનતાથી શોભતા,
ચિરકાળ હો જયવંત, હે ભંડાર જ્ઞાન કળા તણા. (1)

ત્રણ જગતના આધાર ને અવતાર હે ! કરૂણાતણા,
વળી વૈદ્ય હે ! દુર્વાર આ, સસારના દુ:ખો તણા;
વીતરાગ ! વલ્લભ ! વિશ્વના, તુજ પાસ અરજી ઉચ્ચરૂ,
જાણો છતા પણ કહી અને, હું હૃદયને ખાલી કરૂ. (2)

શુ બાળકો માબાપ પાસે, બાળક્રીડા નવ કરે?
ને મુખમાથી જેમ આવે તેમ શુ નવ ઉચ્ચરે?
તેમજ તમારી પાસ, પશ્ચાતાપના અતિરેકથી,
જેવુ બન્યુ તેવુ કહુ, તેમા કશું ખોટું નથી. (3)

મેં દાન તો દીધુ નહિ, ને શીળ પણ પાળ્યું નહીં,
તપથી દમી કાયા નહિ, શુભ ભાવ પણ ભાવ્યો નહીં;
એ ચાર ભેદે ધર્મમાથી, કાંઇ પણ પ્રભુ! નવ કર્યુ,
મારૂં ભ્રમણ ભવસાગરે, નિષ્ફળ ગયુ! નિષ્ફળ ગયુ ? (4)

હું ક્રોધ અગ્નિથી બળ્યો, વળી લોભ-સર્પ ડસ્યો મને,
ગળ્યો માનરૂપી અજગરે, હું કેમ કરી ધ્યાવું તને ?
મન મારૂં માયાજાળમાં, મોહન! મહા મૂંઝાય છે,
બંધાઈ એમ કષાયથી, મમ જીવ બહુ ગભરાય છે. (5)

મેં પરભવે કે આ ભવે, પણ હિત કંઈ કર્યું નહીં,
તેથી કરી સંસારમાં, સુખ અલ્પ પણ પામ્યો નહીં;
જિનેશ! મુજ સમ જન્મ તો, ભવ પૂર્ણ કરવાને થયા,
આવેલ બાજી હાથમાં, અજ્ઞાનથી હારી ગયા. (6)

અમૃત ઝરે તુજ મુખરૂપી, ચંદ્રથી તો પણ પ્રભુ,
ભીજાય નહી મુજ મન અરેરે! શુ કહું? હુ તો વિભુ!
પત્થર થકી પણ કઠણ મારૂ , મન ખરે! કયાંથી દ્રવે?
મરકટ સમા આ મન થકી, હુ તો પ્રભુ હાર્યો હવે. (7)

ભમતાં મહા ભવસાગરે, પામ્યો પસાયે આપના,
જે જ્ઞાન દર્શન શીળ રૂપી, રત્નત્રય દુષ્કર ઘણાં;
તે પણ ગુમાવ્યા મેં પ્રમાદે, હે પ્રભુ! કહુ છું ખરૂં,
કોની કને જગનાથ? આ પોકાર હું જઈને કરૂં? (8)

ઠગવા વિભુ ! આ વિશ્વને, વૈરાગ્યના રંગો ધર્યા,
ને ધર્મના ઉપદેશ રંજન લોકને કરવા કર્યા;
વિદ્યા ભણ્યો હુ વાદ માટે, કેટલી કથની કહુ?
સાધુ થઈને બહારથી, દાંભિક અદરથી રહું. (9)

મેં મુખને મેલુ કર્યું, દોષો પરાયા ગાઈને,
ને નેત્રને નિંદિત કર્યા, પરનારીમા લપટાઈને ;
વળી ચિત્તને દોષિત કર્યું, ચિંતી નઠારૂ પરતણું,
હે નાથ! મારૂ શું થશે? ચાલાક થઈ ચૂક્યોં ઘણું. (10)

કરે કાળજાની કત્લ પીડા, કામની બિહામણી,
એ વિષયમા બની અધ હુ, વિડંબના પામ્યો ઘણી ;
તે પણ પ્રકાશ્યુ આજ લાવી લાજ આપ તણી કને,
જાણો સહુ, તેથી કહુ કરો માફ મારા વાકને. (11)

નવકારમત્ર વિનાશ કીધો, અન્ય મંત્રો જાણીને,
કુશાસ્ત્રના વાકયો વડે, હણી આગમોની વાણીને ;
ધાર્યું હતું કુદેવથી મુજ કર્મ સઘળા કાપવા,
મતિભ્રમ થકી રત્નો ગુમાવી, કાચકટકા મેં ગ્રહર્યા. (12)

આવેલ દ્રષ્ટિમાર્ગમા વીતરાગ! છોડી આપને,
મેં મૂઢતાથી હૃદયમા ધ્યાયા મદનના ચાપને;
નેત્રબાણો ને પયોધર, નાભિને સુદર કટી,
શણગાર સુદરીઓ તણા, છટકેલ થઈ જોયાં અતિ. (13)

મૃગનયનપ્રિય નારી તણા, મુખચદ્રને જોયા થકી,
મુજ મન વિષે જે રગ લાગ્યો અલ્પ પણ ગાઢો અતિ;
તે શ્રુતરૂપ સાગર મહી ધોવા છતા જાતો નથી,
તેનુ કહો કારણ તમે, બચુ કેમ હું આ પાપથી? (14)

સુંદર નથી આ શરીર, કે સમુદાય ગુણ તણો નથી,
ઉત્તમ વિલાસ કળાતણો, દેદીપ્યમાન પ્રભા નથી;
પ્રભુતા નથી તો પણ પ્રભુ! અભિમાનથી અક્કડ ફરૂં,
ચોપાટ ચાર ગતિતણી, સસારમા ખેલ્યા કરૂં. (15)

જીવન ઘટે ક્ષણક્ષણ છતાં પણ પાપબુદ્ધિ નવ ઘટે,
આશા જીવનની જાય પણ, વિષયાભિલાષા નવ મટે;
ઔષધ વિષે કરૂં યત્ન પણ, હુ ધર્મને તો નવ ગણું,
બની મોહમાં મસ્તાન હું , પાયા વિનાના ઘર ચણું. (16)

"આત્મા નથી,પરભવ નથી, વળી પુણ્ય પાપ કશુ નથી"
મિથ્યાત્વની કટુવાણી મેં, ધરી કાન પીધી સ્વાદથી ;
રવિસમ હતા જ્ઞાને કરી, પ્રભુ! આપશ્રી તો પણ અરે!
દીવો લઇ કૂવે પડયો, ધિક્કાર છે મુજને ખરે! (17)

મેં ચિત્તથી નહીં દેવની, કે પાત્રની પૂજા ચહી,
ને શ્રાવકો કે સાધુઓનો, ધર્મ પણ પાળ્યોનહીં!
પામ્યો પ્રભુ! નરભવ છતા, રણમા રડયા જેવું થયું,
ધોબીતણાં કુત્તા સમુ, મમ જીવન સૌ એળે ગયું. (18)

હુ કામધેનુ કલ્પતરુ, ચિંતામણીના ભોગમાં,
ખોટાં છતા ઝખ્યો ઘણું, બની લુબ્ધ આ સંસારમાં;
જે પ્રગટ સુખ દેનાર તારો ધર્મ, તે સેવ્યો નહિ,
મુજ મુર્ખ ભાવોને નિહાળી , નાથ કર! કરુણા કંઇ. (19)

મેં ભોગ સારા ચિંતવ્યા , પણ રોગ સમ જાણ્યા નહિ,
ઇચ્છયું મને બહુ ધન મળે, પણ મૃત્યુને પ્રીછયું નહિ;
ભોગો - વિલાસો નરકમા લઇ જાય તે ભૂલી ગયો,
મધુબિંદુની આશા મહીં , ભયમાત્ર હું ભૂલી ગયો.   (20)

હુ શદ્ધ આચારો વડે, સાધુહૃદયમાં નવ રહ્યો,
કરી કામ પરઉપકારના, યશ પણ ઉપાર્જન નવ કર્યો,
વળી તીર્થના ઉદ્ધાર આદિ કોઇ કાર્યો નવ કર્યા ,
વ્યર્થ ગુમાવ્યો ભવ બધો , આત્માર્થ ને ભૂલી ગયો.   (21)

ગરુ વાણીથી વૈરાગ્ય કેરો રગ લાગ્યો નહિ અને,
દુર્જનતણા વાકયો મહીં શાંતિ મળે કયાંથી મને?
તરૂં કેમ હુ સસાર જ્યાં અધ્યાત્મ ભાવો છે નહીં,
તૂટેલ તળિયાનો ઘડો જળથી ભરાયે કેમ કરી?   (22)

મેં પરભવે નથી ધર્મ કીધો, ને નથી કરતો હજી,
તો આવતા ભવમા કહો કયાથી થશે? હે નાથજી!
ભૂત ભાવિ ને સાપ્રંત ત્રણે ભવ નાથ! હું હારી ગયો,
સ્વામિ! ત્રિશંકુ જેમ હુ આકાશમાં લટકી રહ્યો.   (23)

અથવા નકામુ આપ પાસે નાથ! શુ બકવું ઘણું?
હે દેવતાના પૂજ્ય! આ ચારિત્ર મુજ પોતાતણું;
જાણો સ્વરૂપ ત્રણ લોકનું, તો માહરૂં શું માત્ર આ?
જયા ક્રોડનો હિસાબ નહિ, ત્યાં પાઇની તો વાત કયાં?   (24)

તારાથી ન સમર્થ અન્ય દીનનો ઉદ્ધારનારો પ્રભુ !
મારાથી નહિ અન્ય પાત્ર જગમાં જોતાં જડે હે વિભુ !
મુક્તિ મંગળસ્થાન ! તેથી મુજને ઇચ્છા ન લક્ષ્મી તણી,
આપો સમ્યગ્ રત્ન નાથ ! મુજને તો તૃપ્તિ થાયે ઘણી. (25)

✦ ✦ ✦ ✦ ✦

સમાધિભાવના

ભગવન સમય હો ઐસા, જબ પ્રાણ તનસે નિકલે;
આતમસે લો લગી હો, તુમ ભાવ મુજસે નિકલે. (1)

નિજ સ્વરૂપકે નિહાળકે, તેરેમેં લૌ લગાકે;
તુજ ધ્યાન હું રહાધર, નિજ મગનતાસે નિકલે. (2)

ગુરુજી દરશ દીખાતે, ઉપદેશ ભી સુનાતે;
આરાધના કરાતે, કૃપા વચનસે નિકલે. (3)

પરભાવસે નિરાલા, લગતા હો ધ્યાન ધારા;
ત્યાંગુ સભી આહારા, નિજ ધ્યાન ધૂનસે નિકલે. (4)

સનમુખ સ્વરૂપ તેરા હો, ઉસપર નિગાહ મેરા હો;
સંસારસે નિવૃત હો, આત્મા ચમનસે નિકલે. (5)

मृत्यु महोत्सव

आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।
नाचो गाओ हर्ष मनाओ, मंगल उत्सव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

सर्व परिग्रह का मै त्यागी, निज स्वभाव का मै अनुरागी,
सम्यक् ज्ञान ज्योति उर जागी, अनुपम नर भव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

साम्यभाव निज उर मे धारा, तीव्र कषाय भाव निरवारा,
निज को जन्म मरण से तारा, अब जीवन नव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

राग द्वेष मद मोह हटाऊँ, भव्य भावना द्वादश भाउं,
निज स्वरुप मे ही रम जाऊँ, मंगल अभिनव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

पंच पाप का पूर्ण त्याग है, मुझे किसी से नही राग है,
अंतर मे पूरा विराग है, नही उपद्रव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

अब वियोग की बेला आई, कोई रुदन न करना भाई,
देखा मोह महा दुखदाई, हुआ शिथिल अब है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

क्षमा भावना उर में भरलूं, क्षमा-क्षमा मैं सबसे करलूं।
पर भव जा कर्मो को हरलूं, यह दृढ निश्चय है!
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

तत्व भावना सहज विचारूँ, निज परिणति निजरूप संवारूँ,
अब मैं वीतरागता धारूँ, फिर अवसर कब है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

हुआ आज निर्मल अभ्यंतर सोऽहं सोऽहं जपूं निरंतर,
मेरा आत्मदेव अभ्यंकर, अब न पुनर्भव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

निज के गीत सदा गाऊँगा, महामोक्ष मंगल पाऊँगा,
सिद्धशिला पर मैं जाऊँगा, यह विचार नव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

तन की पीडा तो है तनमें, नही वेदना किंचित मन मे।
लिया समाधिमरण अब, मैने सुधरा यह भव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

मैं तो अजर अमर अविनाशी, काट रहा भव दुख की फांसी,
सिद्धपुरी का मै हूँ वासी, जहां न कलरव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

भेद ज्ञान की बुधि ली मैने, निज आतम की सुधि ली मैंने,
तीर्थयात्रा करली मैने, आतम अनुभव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

निज स्वभाव गुण गाया मैंने, क्रूर विभाव भगाया मैने,
संवर भाव जगाया मैंने, कहीं न आस्त्रव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

बीते समय आत्म जपने मे, परिपूरण हूँ मै अपने में,
मान कषाय न है सपने में, निरुपम मार्दव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

उदासीनता मुझको भाई, समता से हो गई सगाई,
ममता तजी महादुखदायी, जो भव दानव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

मेरा आत्म देव विख्याता, मगलमय मंगल का दाता,
सर्वोत्कृष्ट स्वऋजु सुखदाता, पूर्ण आर्जव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

अब मेरे परिणाम सरल है, आत्म भावना अति निर्मल है,
सहज भाव सम्पूर्ण विमल है, राग पराभव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

कोई नही किसी का जग मे, झूठे नाते है पग पग मे।
मोह तोड आया शिवमग मे, देखो जय जय है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

मन-वच-काय त्रियोग संवारूँ, खान पान सब ही तज डारूँ,
सल्लेखना पूर्ण मैं धारूँ जो सुख आर्णव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

दशलक्षण व्रत मन में लाऊँ, सोलह कारण भाव जगाऊँ,
रत्नत्रय की महिमा गाऊँ, भाव निरास्त्रव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

भाव भासना मुझे हुई है, राग वासना छुई मुई है,
निज सुख की अनुभूति हुई है, उर स्व चतुष्टय है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

सम्यक् दर्शन मैंने पाया, सम्यक् ज्ञान हृदय को भाया,
सम्यक् चारित्र को अपनाया, चेतन निर्भय है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

जन्म-जन्म तक जिनश्रुत पाऊँ, भाव शुभाशुभ दूर हटाऊँ,
एक दिवस शिव पदवी पाऊँ, जो ध्रुव सुखमय है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

पंच परम परमेष्ठी ध्याऊँ, देव शास्त्र गुरु को सिर नाऊँ,
शुद्धातम में ही बस जाऊँ, जो निज वैभव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः जप लूँ, अंत समय दृढ संयम तप लूं,
वीतराग का पावन पथ लूँ, शाश्वत अक्षय है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

यह सन्यास मरण सुखकारा, दुर्मति-दुर्गति नाशन हारा,
मैने मौन महाव्रत धारा, उज्ज्वल परभव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

तन कारा से मुक्त बनूं मै, हर्षित सहज स्वभाव सनूं मै,
क्रम - क्रम से वसु कर्म हनूं मै, निज पद शिवमय है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

मंगल चौक पुराओं भाई, मंगल कलश सजाओ भाई,
मंगल गीत सुनाओ भाई, विदा महोत्सव है।
आज मेरा मृत्यु महोत्सव है।

बारह भावना

वन्दू श्री अरहन्त पद, वीतराग विज्ञान,
वरणो बारह भावना, जग जीवन हित जान। (1)

कहाँ गये चक्री जिन जीता, भरत खण्ड सारा,
कहाँ गये वह राम रु लछमन, जिन रावण मारा,
कहाँ कृष्ण रुक्मिणी सतभामा, अरु सम्पति सगरी,
कहाँ गये वह रग महल अरु, सुवरन की नगरी। (2)

नही रहे वह लोभी कौरव, जूझ मरे रन मे,
गये राज तज पाँडव वन को, अग्नि लगी तन मे,
मोह नीद से उठ रे चेतन, तुझे जगावन को,
हो दयाल उपदेश करे, गुरु बारह भावन को। (3)

(अनित्य भावना)

सूरज चॉद छिपै निकले, ऋतु फिर - फिर कर आवे,
प्यारी आयु ऐसी बीते, पता नही पावे,
पर्वत पतित नदी सरिता जल, बह कर नहिं हटता,
श्वाँस चलत यो घटे काठ ज्यो, आरे सो कटता। (4)

ओस बून्द ज्यो गले धूप में, वा अन्जलि पानी,
छिन-छिन यौवन छीन होत है, क्या समझे प्रानी,
इन्द्रजाल आकाश नगर सम, जग सम्पत्ति सारी,
अथिर रूप ससार विचारो, सब नर अरु नारी। (5)

(अशरण भावना)

काल सिंह ने मृग चेतन को घेरा भव वन में,
नहीं बचावन हारा कोई, यो समझो मन में,
मन्त्र यन्त्र सेना धन सम्पत्ति, राज पाट छूटे,
वश नहिं चलता काल लुटेरा, काय नगरि लूटे। (6)

चक्र रतन हलधर सा भाई, काम नहिं आया,
एक तीर के लगत कृष्ण की, विनश गई काया,
देव धर्म गुरु शरण जगत मे, और नहिं कोई,
भ्रम से फिरे भटकता चेतन, यूं ही उमर खोई। (7)

(संसार भावना)

जनम - मरण अरु जरा रोग से, सदा दुःखी रहता,
द्रव्य क्षेत्र अरु काल भाव भव, परिवर्तन सहता,
छेदन भेदन नरक पशु गति, वध बन्धन सहना,
राग उदय से दुःख सुरगति में, कहाँ सुखी रहना। (8)

भोगि पुण्य फल हो इक इन्द्री, क्या इसमे लाली,
कुतवाली दिन चार वही फिर, खुरपा अरु जाली,
मानुष जन्म अनेक विपतिमय, कही न सुख देखा,
पञ्चम गति सुख मिले, शुभाशुभ का मेटो लेखा। (9)

(एकत्व भावना)

जन्मे मरे अकेला चेतन, सुख दुःख का भोगी,
और किसी का क्या इक दिन, यह देह जुदी होगी,
कमला चलत न पेंड जाय, मरघट तक परिवारा,
अपने-अपने सुख को रोवे, पिता पुत्र दारा। (10)

ज्यों मेले मे पन्थी जन मिलि, नेह फिरे धरते,
ज्यों तरुवर पै रैन बसेरा, पन्छी आ करते,
कोस कोई दो कोस कोई उड, फिर थक-थक हारे,
जाय अकेला हंस संग मे, कोई न पर मारे। (11)

(अन्यत्व भावना)

मोह रुप मृग तृष्णा जल मे, मिथ्या जल चमके,
मृग चेतन नित भ्रम में उठ-उठ, दौडे थक - थक के,
जल नहि पावै प्राण गमावे, भटक- भटक मरता,
वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नही करता। (12)

तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड़ तू ज्ञानी,
मिले अनादि यतन ते बिछुड़े, ज्यो पय अरु पानी,
रुप तुम्हारा सबसो न्यारा, भेद ज्ञान करना,
जोलो पौरुष थके न तो लों, उद्यम सो चरना। (13)

(अशुचि भावना)

तू नित पोखे यह सूखे ज्यों, धोवे त्यों मैली,
निश दिन करे उपाय देह का, रोग दशा फैली,
मात पिता रज वीरज मिलकर, बनी देह तेरी,
माँस हाड़ नश लहू राध की, प्रगट व्याधि घेरी। (14)

काना पौण्डा पड़ा हाथ यह, चूँसे तो रोवै,
फले अनन्त जु धर्म ध्यान की, भूमि विषै बोवे,
केसर चन्दन पुष्प सुगन्धित, वस्तु देख सारी,
देह परसते होय अपावन, निश दिन मल जारी। (15)

(आस्रव भावना)

ज्यों सर जल आवत मोरी त्यों, आस्रव कर्मन को,
दर्वित जीव प्रदेश गहै जब, पुद्गल भरमन को,
भावित आस्रव भाव शुभाशुभ, निश दिन चेतन को,
पाप पुण्य के दोनो करता, कारण बन्धन को। (16)

पन मिथ्यात योग पन्द्रह द्वादश अविरत जानो,
पच रु बीस कषाय मिले सब, सत्तावन मानो,
मोह भाव की ममता टारे, पर परिणति खोते,
करे मोख का यतन निराश्रव, ज्ञानी जन होते। (17)

(संवर भावना)

ज्यो मोरी मे डाट लगावे, तब जल रुक जाता,
त्यो आस्रव को रोके संवर, क्यो नहिं मन लाता,
पंच महाव्रत समिति गुप्तिकर, वचन काय मन को,
दश विधि धर्म परिषह बाइस, बारह भावन को। (18)

यह सब भाव सतावन मिलकर, आस्रव को खोते,
सुपन दशा से जागो चेतन, कहाँ पड़े सोते,
भाव शुभाशुभ रहित शुद्धि, भावन संवर पावै,
डाँट लगत यह नाव पडी, मझधार पार जावै। (19)

(निर्जरा भावना)

ज्यो सरवर जल रुका सूखता, तपन पडे भारी,
संवर रोके कर्म निर्जरा, ह्वै सोखन हारी,
उदय भोग सविपाक समय, पक जाय आम डाली,
दूजी है अविपाक पकावे, पाल विषै माली। (20)

पहली सबके होय नहिं कुछ, सरे काम तेरा,
दूजी करे जु उद्यम करके, मिटे जगत फेरा,
संवर सहित करो तप प्रानी, मिले मुक्ति राणी,
इस दुलहिन की यही सहेली, जाने सब ज्ञानी। (21)

(लोक भावना)

लोक अलोक अकाश माँहि थिर, निराधार जानो,
पुरुष रुप कर कटी भये षट् द्रव्यन सों मानो,
इसका कोई न करता हरता, अमिट अनादी है,
जीव रु पुद्‌गल नाचे यामै, कर्म उपाधि है। (22)

पाप पुण्य सो जीव जगत मे, नित सुख दु:ख भरता,
अपनी करनी आप भरै, सिर औरन के धरता,
मोह कर्म को नाश मेटकर, सब जग की आसा,
निज पद मे थिर होय लोक के, शीश करो वासा। (23)

(बोधिदुर्लभ भावना)

दुर्लभ है निगोद से थावर, अरु त्रस गति पानि,
नर काया को सुरपति तरसे, सो दुर्लभ प्राणी,
उत्तम देश सुसंगति दुर्लभ, श्रावक कुल पाना,
दुर्लभ सम्यक् दुर्लभ संयम, पंचम गुण ठाना। (24)

दुर्लभ रत्नत्रय आराधन दीक्षा का धरना,
दुर्लभ मुनिवर को व्रत पालन, शुद्ध भाव करना,
दुर्लभ तै दुर्लभ है चेतन, बोधि ज्ञान पावे,
पाकर केवलज्ञान नही फिर, इस भव में आवै। (25)

(धर्म भावना)

एकान्तवाद के धारी जग में, दर्शन बहु तेरे,
कल्पित नाना युक्ति बनाकर, ज्ञान हरे मेरे,
हो सुछन्द सब पाप करें सिर, करता के लावे,
कोई छिनक कोई करता से, जग मे भटकावे। (26)

वीतराग सर्वज्ञ दोष बिन, श्री जिनकी वानी,
सप्त तत्व का वर्णन जामें, सब को सुख दानी,
इनका चितवन बार-बार कर, श्रद्धा उर धरना,
'मंगत' इसी जतन तें इक दिन, भवसागर तरना। (27)

एकान्तवास साधक के लिए श्रेयस्कर है

कुटुम्बरुपी काजल की कोठरी मे रहने से संसार बढता है। चाहे जितना उसका सुधार करो, तो भी एकान्तवास से जितना क्षय होने वाला है उसका सौवां हिस्सा भी उस काजल की कोठरी में होने वाला नहीं है। वह कषाय का निमित्त है, मोह के रहने का अनादिकालीन पर्वत है। सुधार करते हुए कदाचित् सम्यगदर्शन होना सम्भव है। इसलिए वहाँ अल्पभाषी होना, अल्प परिचयी होना, अल्प सत्कारी होना, अल्प सहचारी होना, अपने परिणाम का विचार करना, यही श्रेयस्कर है।

बारह भावना

राजा राणा छत्रपति हाथिन के असवार,
मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी बार। (1)

दल बल देवी देवता, मात-पिता परिवार,
मरती बिरियाँ जीव को, कोऊ न राखन हार। (2)

दाम बिना निर्धन दु:खी, तृष्णा वश धनवान,
कहूँ न सुख संसार मे, सब जग देख्यो छान। (3)

आप अकेलो अवतरे, मरै अकेलो होय,
यूँ कबहूं इस जीव को, साथी सगा न कोय। (4)

जहाँ देह अपनी नही, तहाँ न अपनो कोय,
घर संपत्ति पर प्रगट ये, पर है,परिजन लोय। (5)

दिपै चाम चादर मढी, हाड पीजरा देह,
भीतर या सम जगत मे, और नहीं घिन गेह। (6)

मोह नीद के जोर, जगवासी घूमें सदा,
कर्म चोर चहुँ ओर, सरवस लूटैं सुध नही। (7)

सतगुरु देय जगाय, मोह नींद जब उपशमैं,
तब कछु बनहिं उपाय, कर्म चोर आवत रुकैं। (8)

ज्ञान दीप तप तेल भर, घर शोधै भ्रम छोर,
या विधि बिन निकसैं नहीं, पैठे पूरब चोर। (9)

पंच महाव्रत संचरन, समिति पंच परकार,
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार। (10)

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान,
तामें जीव अनादि तैं, भरमत है बिन ज्ञान। (11)

धन कन कंचन राज सुख, सबहि सुलभकर जान,
दुर्लभ है संसार में, एक जथारथ ज्ञान। (12)

जाँचे सुर तरु देय सुख, चिन्तत चिन्ता रैन,
बिन जाँचे बिन चिन्तये, धर्म सकल सुख दैन। (13)

✦ ✦ ✦ ✦ ✦

जिन्दगी इक पल कभी कोई बढा नही पायगा,
रस रसायन सुत सुभट कोई बचा नहीं पायगा,
सत्यार्थ है बस बात यह कुछ भी कहो व्यवहार में,
जीवन - मरण अशरण शरण कोई नहीं संसार में।

सांत्वनाष्टक

शान्त चित्त हो निर्विकल्प हो, आत्मन् निज मे तृप्त रहो,
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ, चिदानन्द रस सहज पिओ।

स्वयं स्वयं में सर्व वस्तुएं सदा परिणमित होती है,
इष्ट अनिष्ट न कोई जग मे, व्यर्थ कल्पना झूठी है,
धीर-वीर हो मोह भाव तज आतम-अनुभव किया करो। (1)

देखो प्रभु के ज्ञान मांहि सब लोकालोक झलकता है,
फिर भी सहज मग्न अपने मे, लेश नहीं आकुलता है,
सच्चे भक्त बनो प्रभुवर के ही पथ का अनुसरण करो। (2)

देखो मुनिराजो पर भी, कैसे कैसे उपसर्ग हुए,
धन्य धन्य वे साधु साहसी, आराधन से नही चिगे,
उनको निज आदर्श बनाओ, उर में समता भाव धरो। (3)

व्याकुल होना तो दुख से, बचने का कोई उपाय नही,
होगा भारी पाप बध ही होवे भव्य अपाय नहीं,
ज्ञानाभ्यास करो मन मांही, दुर्विकल्प दुखरुप तजो। (4)

अपने में सर्वस्व है अपना, पर द्रव्यों में लेश नहीं,
हो विमूढ पर में ही क्षण क्षण करो व्यर्थ संक्लेश नहीं,
अरे विकल्प अकिंचित्कर ही ज्ञाता हो ज्ञाता ही रहो। (5)

अन्तर्दृष्टि से देखो नित, परमानन्दमय आत्मा,
स्वयंसिद्ध निर्द्वन्द निरामय, शुद्ध बुद्ध परमात्मा,
आकुलता का काम नही कुछ, ज्ञानानन्द का वेदन हो। (6)

सहज तत्व की सहज भावना, ही आनन्द प्रदाता है,
जो भावे निश्चय शिव पावे, आवागमन मिटाता है,
सहज तत्व ही सहज ध्येय है, सहज रुप नित ध्यान धरो। (7)

उत्तम जिन वचनामृत पाया, अनुभव कर स्वीकार करो,
पुरूषार्थी हो स्वाश्रय से इन विषयो का परिहार करो,
ब्रह्म भाव मय मंगल चर्या हो निज मे ही मग्न रहो। (8)

भोर की स्वर्णिम छटा सम क्षणिक सब संयोग हैं,
पद्मपत्रों पर पडे जलबिन्दु सम सब भोग है,
सान्ध्य दिनकर लालिमा सम लालिमा है भाल की,
सब पर पडी मनहूस छाया विकट काल कराल की।

અપૂર્વ અવસર

અપૂર્વ અવસર એવો ક્યારે આવશે?
ક્યારે થઈશુ બાહ્યાંતર નિર્ગ્રંથ જો?
સર્વ સબધનું બંધન તીક્ષ્ણ છેદી ને,
વિચરશું ક્વ મહત્પુરુષને પથ જો ? (1)

સર્વ ભાવથી ઔદાસીન્યવૃત્તિ કરી,
માત્ર દેહ તે સંયમહેતુ હોય જો;
અન્ય કારણે અન્ય કશું કલ્પે નહી,
દેહે પણ કિંચિત્ મૂર્છા નવ જોય જો (2)

દર્શનમોહ વ્યતીત થઇ ઊપજયો બોધ જે,
દેહ ભિન્ન કેવળ ચૈતન્યનુ જ્ઞાન જો;
તેથી પ્રક્ષીણ ચારિત્રમોહ વિલોકિયે,
વર્તે એવુ શુદ્ધ સ્વરૂપનું ધ્યાન જો. (3)

આત્મ સ્થિરતા ત્રણ સંક્ષિપ્ત યોગની,
મુખ્યપણે તો વર્તે દેહપર્યંત જો;
ઘોર પરીષહ કે ઉપસર્ગભયે કરી,
આવી શકે નહીં તે સ્થિરતાનો અત જો. (4)

સંયમના હેતુથી યોગપ્રવર્તના,
સ્વરૂપલક્ષે જિન આજ્ઞા આધીન જો;
તે પણ ક્ષણ ક્ષણ ઘટતી જાતી સ્થિતિમાં,
અંતે થાયે નિજસ્વરૂપમાં લીન જો. (5)

પંચ વિષયમાં રાગદ્વેષ વિરહિતતા,
પચ પ્રમાદે ન મળે મનનો ક્ષોભ જો;
દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર ને કાળ, ભાવ પ્રતિબંધ વણ,
વિચરવું ઉદયાધીન પણ વીતલોભ જો. (6)

ક્રોધ પ્રત્યે તો વર્તે ક્રોધસ્વભાવતા,
માન પ્રત્યે તો દીનપણાનું માન જો;
માયા પ્રત્યે માયા સાક્ષી ભાવની,
લોભ પ્રત્યે નહીં લોભ સમાન જો. (7)

બહુ ઉપસર્ગકર્તા પ્રત્યે પણ ક્રોધ નહીં,
વંદે ચક્રી તથાપિ ન મળે માન જો;
દેહ જાય પણ માયા થાય ન રોમમાં,
લોભ નહીં છો પ્રબળ સિદ્ધિ નિદાન જો. (8)

નગ્નભાવ, મુંડભાવ સહ અસ્નાનતા,
અદંતધોવન આદિ પરમ પ્રસિદ્ધ જો;
કેશ, રોમ, નખ કે અંગે શૃંગાર નહીં,
દ્રવ્યભાવ સંયમમય નિર્ગ્રંથ સિદ્ધ જો. (9)

શત્રુ મિત્ર પ્રત્યે વર્તે સમદર્શિતા,
માન અમાને વર્તે તે જ સ્વભાવ જો;
જીવિત કે મરણે નહીં ન્યૂનાધિકતા,
ભવ મોક્ષે પણ શુદ્ધ વર્તે સમભાવ જો. (10)

એકાકી વિચરતો વળી સ્મશાનમાં,
વળી પર્વતમા વાઘ સિંહ સયોગ જો;
અડોલ આસન, ને મનમાં નહી ક્ષોભતા,
પરમ મિત્રનો જાણે પામ્યા યોગ જો. (11)

ઘોર તપશ્ચર્યામાં પણ મનને તાપ નહીં,
સરસ અન્ને નહીં મનને પ્રસન્નભાવ જો;
રજકણ કે રિદ્ધિ વૈમાનિક દેવની,
સર્વે માન્યાં પુદ્‌ગલ એક સ્વભાવ જો. (12)

એમ પરાજય કરીને ચારિત્ર મોહનો,
આવું ત્યાં જ્યાં કરણ અપૂર્વ ભાવ જો;
શ્રેણી ક્ષપકતણી કરીને આરૂઢતા,
અનન્ય ચિંતન અતિશય શુદ્ધ સ્વભાવ જો. (13)

મોહ સ્વયંભૂરમણ સમુદ્ર તરી કરી,
સ્થિતિ ત્યાં જ્યાં ક્ષીણ મોહ ગુણસ્થાન જો;
અંત સમય ત્યાં પૂર્ણ સ્વરૂપ વીતરાગ થઇ,
પ્રગટાવું નિજ કેવળજ્ઞાન નિધાન જો. (14)

ચાર કર્મ ઘનઘાતી તે વ્યવચ્છેદ જ્યાં,
ભવનાં બીજતણો આત્યંતિક નાશ જો;
સર્વ ભાવ જ્ઞાતા દ્રષ્ટા સહ શુદ્ધતા,
કૃતકૃત્ય પ્રભુ વીર્ય અનંત પ્રકાશ જો. (15)

વેદનીયાદિ ચાર કર્મ વર્તે જહાં,
બળી સીંદરીવત્ આકૃતિ માત્ર જો;
તે દેહાયુષ આધીન જેની સ્થિતિ છે,
આયુષ પૂર્ણે, મટિયે દૈહિક પાત્ર જો. (16)

મન, વચન, કાયા ને કર્મ ની વર્ગણા,
છૂટે જહાં સકળ પુદ્ગળ સંબંધ જો;
એવું અયોગી ગુણસ્થાનક ત્યાં વર્તતું,
મહાભાગ્ય સુખદાયક પૂર્ણ અબંધ જો. (17)

એક પરમાણુ માત્રની મળે ન સ્પર્શતા,
પૂર્ણ કલક રહિત અડોલ સ્વરૂપ જો;
શુદ્ધ નિરંજન ચૈતન્યમૂર્તિ અનન્યમય,
અગુરુ લઘુ, અમૂર્ત્ત સહજપદરૂપ જો. (18)

પૂર્વપ્રયોગાદિ કારણના યોગથી,
ઊર્ધ્વગમન સિદ્ધાલય પ્રાપ્તિ સુસ્થિત જો;
સાદિ અનંત અનંત સમાધિસુખમાં,
અનંત દર્શન, જ્ઞાન અનંત સહિત જો. (19)

જે પદ શ્રી સર્વજ્ઞે દીઠું જ્ઞાનમાં,
કહી શક્યા નહીં પણ તે શ્રીભગવાન જો;
તેહ સ્વરૂપને અન્ય વાણી તે શું કહે?
અનુભવગોચર માત્ર રહ્યું તે જ્ઞાન જો. (20)

એહ પરમપદ પ્રાપ્તિનું કર્યું ધ્યાન મેં,
ગજા વગરને હાલ મનોરથરૂપ જો;
તો પણ નિશ્ચય રાજચંદ્ર મનને રહ્યો,
પ્રભુઆજ્ઞાએ થાશું તે જ સ્વરૂપ જો. (21)

नर देह उत्तम देश पूरण आयु शुभ आजीविका,
दुर्वासना की मंदता परिवार की अनुकूलता,
सत् सज्जनो की संगती सद्धर्म की आराधना,
है उत्तरोत्तर महादुर्लभ आत्मा की साधना।

संयोग हैं अशरण सभी निज आतमा ध्रुवधाम है,
पर्याय व्ययधर्मा परन्तु द्रव्य शाश्वत धाम है,
इस सत्य को पहिचानना ही भावना का सार है,
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है।

અમૂલ્ય તત્ત્વવિચાર

બહુ પુણ્ય કેરા પુંજથી શુભ દેહ માનવનો મળ્યો,
તોયે અરે! ભવચક્રનો આંટો નહિ એકકે ટળ્યો;
સુખ પ્રાપ્ત કરતાં સુખ ટળે છે લેશ એ લક્ષે લહો,
ક્ષણ ક્ષણ ભયંકર ભાવમરણે કાં અહો રાચી રહો ? (1)

લક્ષ્મી અને અધિકાર વધતાં, શું વધ્યું તે તો કહો?
શું કુટુંબ કે પરિવારથી વધવાપણું , એ નય ગ્રહો;
વધવાપણું, સંસારનુ નરદેહને હારી જવો,
એનો વિચાર નહીં અહોહો ! એક પળ તમને હવો ! (2)

નિર્દોષ સુખ, નિર્દોષ આનદ, લ્યો ગમે ત્યાથી ભલે,
એ દિવ્ય શકિતમાન જેથી જંજીરેથી નીકળે;
પરવસ્તુમા નહિ મૂંઝવો, એની દયા મુજને રહી,
એ ત્યાગવા સિદ્ધાંત કે પશ્ચાત્ દુ:ખ તે સુખ નહીં. (3)

હુ કોણ છુ ? ક્યાથી થયો? શું સ્વરૂપ છે મારૂ ખરૂં ?
કોના સબધે વળગણા છે ? રાખુ કે એ પરહરૂં ?
એના વિચાર વિવેકપૂર્વક શાંતભાવે જો કર્યા,
તો સર્વ આત્મિક જ્ઞાનના સિદ્ધાંત તત્ત્વ અનુભવ્યાં. (4)

તે પ્રાપ્ત કરવા વચન કોનું સત્ય કેવળ માનવુ ?
નિર્દોષ નરનુ કથન માનો તેહ જેણે અનુભવ્યું;
રે આત્મ તારો! આત્મ તારો! શીઘ્ર એને ઓળખો,
સર્વાત્મમાં સમદ્રષ્ટિ દ્યો આ વચનને હૃદયે લખો. (5)

શ્રીસદ્‌ગુરુભક્તિ - રહસ્ય

હે પ્રભુ! હે પ્રભુ! શું કહુ, દીનાનાથ દયાળ;
હુ તો દોષ અનતનુ, ભાજન છું કરૂણાળ. (1)

શુદ્ધ ભાવ મુજમા નથી, નથી સર્વ તુજરૂપ;
નથી લઘુતા કે દીનતા, શુ કહું પરમસ્વરૂપ? (2)

નથી આજ્ઞા ગુરુદેવની, અચળ કરી ઉરમાંહી;
આપ તણો વિશ્વાસ દ્રઢ, ને પરમાદર નાહી. (3)

જોગ નથી સત્સગનો, નથી સત્સેવા જોગ;
કેવળ અર્પણતા નથી, નથી આશ્રય અનુયોગ. (4)

હુ પામર શું કરી શકું? એવો નથી વિવેક;
ચરણ શરણ ધીરજ નથી, મરણ સુધીની છેક. (5)

અચિંત્ય તુજ માહાત્મ્યનો, નથી પ્રફુલ્લિત ભાવ;
અંશ ન એકે સ્નેહનો, ન મળે પરમ પ્રભાવ. (6)

અચળરૂપ આસક્તિ નહિ, નહીં વિરહનો તાપ;
કથા અલભ તુજ પ્રેમની, નહિ તેનો પરિતાપ. (7)

ભક્તિમાર્ગ પ્રવેશ નહિ, નહીં ભજન દ્રઢ ભાન;
સમજ નહીં નિજ ધર્મની, નહિ શુભ દેશે સ્થાન. (8)

કાળદોષ કળિથી થયો, નહિ મર્યાદાધર્મ ;
તોયે નહીં વ્યાકુળતા, જુઓ પ્રભુ મુજ કર્મ. (9)

સેવાને પ્રતિકૂળ જે, તે બંધન નથી ત્યાગ;
દેહેંદ્રિય માને નહીં, કરે બાહ્ય પર રાગ. (10)

તુજ વિયોગ સ્ફુરતો નથી, વચન નયન યમ નાહીં;
નહિ ઉદાસ અનભક્તથી , તેમ ગૃહાદિક માંહી. (11)

અહંભાવથી રહિત નહિ , સ્વધર્મ સંચય નાહીં;
નથી નિવૃત્તિ નિર્મળપણે, અન્ય ધર્મની કાંઇ. (12)

એમ અનંત પ્રકારથી, સાધન રહિત હુંય;
નહીં એક સદ્ગુણ પણ, મુખ બતાવું શુંય ? (13)

કેવળ કરુણામૂર્તિ છો, દીનબંધુ દીનનાથ!
પાપી પરમ અનાથ છું, ગ્રહો પ્રભુજી ! હાથ. (14)

અનત કાળથી આથડયો, વિના ભાન ભગવાન,
સેવ્યા નહિ ગુરુ સંતને, મૂકયું નહિ અભિમાન. (15)

સંતચરણ આશ્રય વિના, સાધન કર્યાં અનેક,
પાર ન તેથી પામિયો, ઊગ્યો ન અંશ વિવેક. (16)

સહુ સાધન બંધન થયાં, રહ્યો ન કોઇ ઉપાય,
સત્ સાધન સમજયો નહીં, ત્યા બંધન શુ જાય? (17)

પ્રભુ પ્રભુ લય લાગી નહીં, પડ્યો ન સદ્ગુરુ પાય,
દીઠા નહિ નિજ દોષ તો, તરીએ કોણ ઉપાય? (18)

અધમાધમ અધિકો પતિત, સકળ જગતમાં હુંય,
એ નિશ્ચય આવ્યા વિના, સાધન કરશે શુંય? (19)

પડી પડી તુજ પદપંકજે, ફરી ફરી માગું એજ,
સદ્ગુરુ સંત સ્વરૂપ તુજ, એ દ્રઢતા કરી દેજ. (20)

दुखमय निरर्थक मलिन जो संपूर्णतः निस्सार है,
जगजालमय गति चार मे ससरण ही संसार है,
भ्रमरोगवश भव-भव भ्रमण संसार का आधार है,
संयोगजा चिद्वृत्तियाँ ही वस्तुतः संसार है।

मंथन करे दिन-रात जल घृत हाथ मे आवे नही,
रज-रेत पेले रात-दिन पर तेल ज्यों पावें नहीं,
सद्भाग्य बिन ज्यों संपदा मिलती नही व्यापार में,
निज आतमा के भान बिन त्यो सुख नहीं संसार में।

કાળ કોઇને નહિ મૂકે

મોતીતણી માળા ગળામાં મૂલ્યવંતી મલકતી,
હિરાતણા શુભ હારથી બહુ કઠકાંતિ ઝળકતી;
આભૂષણોથી ઓપતા ભાગ્યા મરણને જોઇને,
જન જાણીએ મન માનીએ નવ કાળ મૂકે કોઇને.

મણિમય મુગટ માથે ધરીને કર્ણ કુડળ નાખતા,
કાચન કડાં કરમા ધરી કશીએ કચાશ ન રાખતા;
પળમાં પડયા પૃથ્વીપતિ એ ભાન ભૂતળ ખોઇને,
જન જાણીએ મન માનીએ નવ કાળ મૂકે કોઇને.

દશ આંગળીમાં માંગલિક મુદ્રા જડિત માણિકયથી,
જે પરમ પ્રેમે પેરતા, પોચી કળા બારીકથી;
એ વેઢ વીંટી સર્વ છોડી,ચાલિયા મુખ ધોઇને,
જન જાણીએ મન માનીએ નવ કાળ મૂકે કોઇને.

મૂછ વાકડી કરી ફાંકડા થઈ લીંબુ, ધરતા તે પરે,
કાપેલ રાખી કાતરા, હરકોઇના હૈયાં હરે;
એ સાંકડીમાં આવિયા છટકયા તજી સહુ સોઇને,
જન જાણીએ મન માનીએ નવ કાળ મૂકે કોઇને.

છો ખંડના અધિરાજ જે ચંડે કરીને નીપજયા,
બ્રહ્માડમાં બળવાન થઇને ભૂપ ભારે ઊપજયા;
એ ચતુર ચક્રી ચાલિયા હોતા નહોતા હોઇને,
જન જાણીએ મન માનીએ નવ કાળ મૂકે કોઇને.

જે રાજનીતિ નિપુણતામા ન્યાયવંતા નીવડયા,
અવળા કર્યે જેના બધા સવળા સદા પાસા પડયા;

એ ભાગ્યશાળી ભાગીયા તે ખટપટો સૌ ખોઈને,
જન જાણીએ મન માનીએ નવ કાળ મૂકે કોઈને.

તરવાર બહાદુર ટેક ધારી પૂર્ણતામાં પેખિયા,
હાથી હણે હાથે કરી તે કેસરી સમ દેખિયા;
એવા ભલા ભડવીર તે અતે રહેલા રોઈને,
જન જાણીએ મન માનીએ નવ કાળ મૂકે કોઈને.

◆ ◆ ◆ ◆ ◆

इस सत्य से अनभिज्ञ ही रहते सदा बहिरातमा ,
पहिचानते निजतत्व जो वे ही विवेकी आतमा ,
निज आतमा को जानकर निज मे जमे जो आतमा ,
वे भव्यजन बन जायेगे पर्याय मे परमातमा ।

सत्यार्थ है बस बात यह कुछ भी कहो व्यवहार मे,
संयोग हैं सर्वत्र पर साथी नही संसार मे ,
संयोग की आराधना संसार का आधार है,
एकत्व की आराधना आराधना का सार है।

ધર્મ વિષે

સાહ્યબી સુખદ હોય, માનતણો મદ હોય,
ખમા ખમા ખુદ હોય, તે તો કશા કામનું?
જુવાનીનું જોર હોય, એશનો અકોર હોય,
દોલતનો દોર હોય, તે તો સુખ નામનુ;
વનિતા વિલાસ હોય, પ્રૌઢતા પ્રકાશ હોય,
દક્ષ જેવા દાસ હોય, હોય સુખ ધામનું;
વદે રાયચંદ એમ, સદ્ધર્મને ધાર્યા વિના,
જાણી લેજે સુખ એ તો બેએ જ બદામનુ!

મોહ માન મોડવાને, ફેલપણું ફોડવાને,
જાળફંદ તોડવાને, હેતે નિજ હાથથી;
કુમતિને કાપવાને, સુમતિને સ્થાપવાને,
મમત્વને માપવાને, સકલ સિદ્ધાતથી;
મહા મોક્ષ માણવાને, જગદીશ જાણવાને,
અજન્મતા આણવાને, વળી ભલી ભાતથી;
અલૌકિક અનુપમ, સુખ અનુભવવાને,
ધર્મ ધારણાને ધરો, ખરેખરી ખાંતથી.

દિનકર વિના જેવો, દિનનો દેખાવ દીસે,
શશી વિના જેવી રીતે શર્વરી સુહાય છે;
પ્રજાપતિ વિના જેવી, પ્રજા પુર તણી પેખો,
સુરસ વિનાની જેવી, કવિતા કહાય છે;
સલિલ વિહીન જેવી, સરિતાની શોભા અને,
ભર્ત્તાર વિહીન જેવી, ભામિની ભળાય છે;
વદે રાયચંદ વીર, સદ્ધર્મને ધાર્યા વિના,
માનવી મહાન તેમ, કુકર્મી કળાય છે.
ચતુરો ચોંપેથી ચાહી ચિંતામણિ ચિત્ત ગણે,
પંડિતો પ્રમાણે છે પારસમણિ પ્રેમથી;

કવિઓ કલ્યાણકારી કલ્પતરુ કથે જેને,
સુધાનો સાગર કથે, સાધુ શુભ ક્ષેમથી;
આત્માના ઉદ્ધારને ઉમગથી અનુસરો જો,
નિર્મળ થવાને કાજે, નમો નીતિ નેમથી;
વદે રાયચંદ વીર, એવું ધર્મરૂપ જાણી,
ધર્મવૃત્તિ ધ્યાન ધરો, વિલખો ન વેમથી.

ધર્મ વિના પ્રીત નહી, ધર્મ વિના રીત નહીં,
ધર્મ વિના હિત નહી, કથું જન કામનુ;
ધર્મ વિના ટેક નહી, ધર્મ વિના નેક નહીં,
ધર્મ વિના ઐક્ય નહીં, ધર્મ ધામ રામનું;
ધર્મ વિના ધ્યાન નહી , ધર્મ વિના જ્ઞાન નહી,
ધર્મ વિના ભાન નહીં , જીવ્યુ કોના કામનુ ?
ધર્મ વિના તાન નહી , ધર્મ વિના સાન નહીં ;
ધર્મ વિના ગાન નહીં, વચન તમામનું.

ધર્મ વિના ધનધામ, ધાન્ય ધૂળધાણી ધારો,
ધર્મ વિના ધરણીમા, ધિક્કાર ધરાય છે ;
ધર્મ વિના ધીમંતની, ધારણાઓ ધોખો ધરે,
ધર્મ વિના ધાર્યું ધૈર્ય , ધુમ થઇ ધમાય છે ;
ધર્મ વિના ધરાધર, ધુતાશે, ન ધામધુમે,
ધર્મ વિના ધ્યાની ધ્યાન, ઢોંગ ઢંગે ધાય છે ;
ધારો, ધારો ધવળ, સુધર્મની ધુરંધરતા,
ધન્ય ! ધન્ય ! ધામે ધામે ધર્મથી ધરાય છે.

મૂળ માર્ગ

મૂળ મારગ સાભળો જિનનો રે, કરી વૃત્તિ અખંડ સન્મુખ;
નોય પૂજાદિની જો કામના રે,નોય વ્હાલું અંતર ભવદુ ખ.

કરી જોજો વચનની તુલના રે, જોજો શોધીને જિન સિદ્ધાંત;
માત્ર કહેવું પરમારથહેતુથી રે,કોઇ પામે મુમુક્ષુ વાત.

જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્રની શુદ્ધતા રે, એકપણે અને અવિરૂદ્ધ;
જિનમારગ તે પરમાર્થથી રે; એમ કહ્યું સિદ્ધાંતે બુધ.

લિંગ અને ભેદો જે વ્રતના રે, દ્રવ્ય દેશ કાળાદિ ભેદ;
પણ જ્ઞાનાદિની જે શુદ્ધતા રે, તે તો ત્રણે કાળે અભેદ.

હવે જ્ઞાન દર્શનાદિ શબ્દનો રે, સક્ષેપે સુણો પરમાર્થ ;
તેને જોતા વિચારી વિશેષથી રે, સમજાશે ઉત્તમ આત્માર્થ.

છે દેહાદિથી ભિન્ન આત્મા રે, ઉપયોગી સદા અવિનાશ;
એમ જાણે સદ્ગુરુ ઉપદેશથી રે, કહ્યું જ્ઞાન તેનું નામ ખાસ

જે જ્ઞાને કરીને જાણિયું રે, તેની વર્તે છે શુદ્ધ પ્રતીત ;
કહ્યું ભગવંતે દર્શન તેહને રે, જેનું બીજું નામ સમકીત.

જેમ આવી પ્રતીતિ જીવની રે, જાણ્યો સર્વેથી ભિન્ન અસંગ ;
તેવો સ્થિર સ્વભાવ તે ઊપજે રે, નામ ચારિત્ર તે અણલિંગ.

તે ત્રણે અભેદ પરિણામથી રે, જ્યારે વર્તે તે આત્મારૂપ;
તેહ મારગ જિનનો પામિયો રે, કિંવા પામ્યો તે નિજસ્વરૂપ.

એવાં મૂળ જ્ઞાનાદિ પામવા રે, અને જવા અનાદિ બંધ;
ઉપદેશ સદ્ગુરુનો પામવો રે, ટાળી સ્વચ્છંદ ને પ્રતિબંધ.

એમ દેવ જિનંદે ભાખિયું રે , મોક્ષમારગનું શુદ્ધ સ્વરૂપ;
ભવ્ય જનોના હિતને કારણે રે, સંક્ષેપે કહ્યું સ્વરૂપ.

✦ ✦ ✦ ✦ ✦

जिस देह को निज जानकर नित रम रहा जिस देह में,
जिस देह को निज मानकर रच-पच रहा जिस देह में,
जिस देह मे अनुराग है एकत्व है जिस देह में,
क्षण एक भी सोचा कभी क्या-क्या भरा उस देह मे।

क्या- क्या भरा उस देह में अनुराग है जिस देह मे,
उस देह का क्या रुप है आतम रहे जिस देह में,
मलिन मल पल रुधिर कीकस वसा का आवास है,
जडरुप है तन किन्तु इसमें चेतना का वास है।

શ્રી સદ્ગુરુ -માહાત્મ્ય

યમનિયમ સંજમ આપ કિયો, પુનિ ત્યાગ બિરાગ અથાગ લહ્યો;
વનવાસ લિયો મુખ મૌન રહ્યો, દ્રઢ આસન પદ્મ લગાય દિયો.

મન પૌન નિરોધ સ્વબોધ કિયો, હઠજોગ પ્રયોગ સુ તાર ભયો;
જપ ભેદ જપે તપ ત્યોંહિ તપે, ઉરસેંહિ ઉદાસી લહિ સબપૈં.

સબ શાસ્ત્રન કે નયધારી હિયે, મત મંડન ખંડન ભેદ લિયે;
વહ સાધન બાર અનંત કિયો, તદપિ કછુ હાથ હજુ ન પર્યો.

અબ ક્યૌં ન બિચારત હૈ મનસેં, કછુ ઔર રહા ઉન સાધનસેં ?
બિન સદ્ગુરુ કોય ન ભેદ લહે, મુખ આગલ હૈ કહ બાત કહેં ?

કરુના હમ પાવત હે તુમકી, વહ બાત રહી સુગુરુ ગમકી;
પલમેં પ્રગટે મુખ આગલસેં , જબ સદ્ગુરુચર્ન સુપ્રેમ બસેં .

તનસેં, મનસેં, ધનસેં, સબસેં, ગુરુદેવકી આન સ્વઆત્મ બસેં;
તબ કારજ સિદ્ધ બને અપનો, રસ અમૃત પાવહિ પ્રેમ ઘનો.

વહ સત્ય સુધા દરસાવહિગે, ચતુરાંગુલ હે દ્રગસે મિલહે;
રસ દેવ નિરંજન કો પિવહી, ગહિ જોગ જુગોજુગ સો જીવહિ.

પર પ્રેમ પ્રવાહ બઢે પ્રભુસેં , સબ આગમભેદ સુઉર બસેં;
વહ કેવલકો બીજ ગ્યાનિ કહે, નિજકો અનુભૌ બતલાઇ દિયે.

મંગળ - સ્તુતિ

મગલમય મગલકરણ વીતરાગ વિજ્ઞાન,
નમો તાહી જાતે ભયે અરિહંતાદિ મહાન.

વિશ્વભાવ વ્યાપિ તદપિ એક વિમલ ચિદ્રૂપ,
જ્ઞાનાનંદ મહેશ્વરા જયવંતા જિન ભૂપ.

મહત્તત્ત્વ મહનીય મહ મહાધામ ગુણધામ,
ચિદાનદ પરમાતમા વંદો રમતારામ.

તીન ભુવન ચૂડા રતન સમ શ્રી જિનકે પાય,
નમત પાઈએ આપ પદ સબ વિધિ બધ નશાય.

દર્શનં દેવદેવસ્ય દર્શન પાપ નાશનમ્,
દર્શનં સ્વર્ગસોપાન દર્શનં મોક્ષ સાધનમ્.

દર્શનાદ્ દુરિતધ્વંસી વદનાદ્ વાંછિતપ્રદ
પૂજનાત્ પૂરક શ્રીણાં જિન સાક્ષાત્ સુરદ્રુમ

પ્રભુ દર્શન સુખ સપદા પ્રભુ દર્શન નવનિધિ,
પ્રભુ દર્શનસેં પામિયે સકલ મનોરથ સિદ્ધિ.

બ્રહ્માનંદં પરમસુખદં કેવલં જ્ઞાનમૂર્તિમ્,
દ્વન્દ્વાતીતં ગગનસદ્રશ તત્ત્વમસ્યાદિ લક્ષ્યમ્

ગરુર્બ્રહ્મા ગુરુર્વિષ્ણુર્ગુરુર્દેવો મહેશ્વર ,
ગુરુ સાક્ષાત્ પરબ્રહ્મ તસ્મૈ શ્રી ગુરવે નમ

ધ્યાનમૂલ ગુરુમૂર્તિ પૂજામૂલં ગુરુપદમ્,
મંત્રમૂલં ગુરુવાક્યં મોક્ષમૂલં ગુરુકૃપા.

અખંડમંડલાકારં વ્યાપ્તં યેન ચરાચરમ્,
તત્પદં દર્શિત યેન તસ્મૈ શ્રી ગુરવે નમ.

અજ્ઞાનતિમિરાન્ધાના જ્ઞાનાંજનશલાકયા,
ચક્ષુરુન્મિલિતં યેન તસ્મૈ શ્રી ગુરવે નમ.

ધ્યાનધૂપં મન પુષ્પં પંચેન્દ્રિય હુતાશનમ્,
ક્ષમાજાપ સતોષપૂજા પૂજયો દેવો નિરંજન.

અહો! અહો! શ્રી સદ્ગુરુ, કરુણાસિંધુ અપાર,
આ પામર પર પ્રભુ કર્યો, અહો! અહો! ઉપકાર.

શું પ્રભુ ચરણ કને ધરું, આત્માથી સૌ હીન,
તે તો પ્રભુએ આપીઓ, વર્તું ચરણાધીન.

આ દેહાદિ આજથી, વર્તો પ્રભુ આધીન,
દાસ દાસ હુ દાસ છું, આપ પ્રભુનો દીન.

ષટ્ સ્થાનક સમજાવીને, ભિન્ન બતાવ્યો આપ;
મ્યાનથકી તરવારવત્, એ ઉપકાર અમાપ.

જે સ્વરૂપ સમજયા વિના, પામ્યો દુ ખ અનંત,
સમજાવ્યુ તે પદ નમું, શ્રી સદ્ગુરુ ભગવંત.

પરમ પુરૂષ પ્રભુ સદ્ગુરુ, પરમ જ્ઞાન સુખ ધામ,
જેણે આપ્યું ભાન નિજ, તેને સદા પ્રણામ.

દેહ છતા જેની દશા, વર્તે દેહાતીત,
તે જ્ઞાની ના ચરણમાં, હો વદન અગણિત.

ક્ષમાપના

હે ભગવાન ! હું બહુ ભૂલી ગયો.
મેં તમારાં અમૂલ્ય વચનને લક્ષમાં લીધાં નહીં.

તમારા કહેલાં અનુપમ તત્વનો મેં વિચાર કર્યો નહીં.
તમારા પ્રણીત કરેલા ઉત્તમશીલને સેવ્યું નહીં . તમારા કહેલાં
દયા, શાંતિ, ક્ષમા અને પવિત્રતા મેં ઓળખ્યાં નહીં.

હે ભગવન્ ! હુ ભૂલ્યો, આથડ્યો, રઝળ્યો અને અનંત
સસારની વિટમ્બનામા પડયો છું.

હુ પાપી છું . હું બહુ મદોન્મત્ત અને કર્મરજથી કરીને
મલિન છુ.

હે પરમાત્મા ! તમારા કહેલાં તત્ત્વ વિના મારો મોક્ષ નથી.

હુ નિરંતર પ્રપંચમા પડયો છુ. અજ્ઞાનથી અંધ થયો છુ.

મારામાં વિવેકશકિત નથી અને હુ મૂઢ છું, નિરાશ્રિત
છુ, અનાથ છું.

નિરાગી પરમાત્મા ! હું હવે તમારૂં , તમારા ધર્મનું
અને તમારા મુનિનું શરણ ગ્રહું છું . મારા અપરાધ ક્ષય
થઇ હું તે સર્વ પાપથી મુકત થઉં એ મારી અભિલાષા
છે. આગળ કરેલાં પાપોનો હું હવે પશ્ચાત્તાપ કરૂં છું.

જેમ જેમ હું સૂક્ષ્મ વિચારથી ઊંડો ઊતરૂં છું તેમ તેમ
તમારા તત્ત્વના ચમત્કારો મારા સ્વરૂપનો પ્રકાશ કરે છે.

તમે નિરાગી, નિર્વિકારી, સત્ચિદાનંદસ્વરૂપ, સહજાનંદી,
અનંતજ્ઞાની, અનંતદર્શી અને ત્રૈલોક્યપ્રકાશક છો.

હુ માત્ર મારા હિતને અર્થે તમારી સાક્ષીએ ક્ષમા ચાહું છું.

એક પળ પણ તમારા કહેલાં તત્ત્વની શંકા ન થાય,
તમારા કહેલા રસ્તામાં અહોરાત્ર હુ રહું,
એ જ મારી આકાક્ષા અને વૃત્તિ થાઓ !

હે સર્વજ્ઞ ભગવાન ! તમને હું વિશેષ શું કહું? તમારાથી
કંઇ અજાણ્યુ નથી? માત્ર પશ્ચાત્તાપથી હું કર્મજન્ય
પાપની ક્ષમા ઇચ્છું છું.

ૐ શાતિ શાંતિ શાંતિઃ

પ્રણિપાત સ્તુતિ

હે પરમકૃપાળુ દેવ !

જન્મ, જરા, મરણાદિ સર્વ દુઃખોનો અત્યંત ક્ષય કરનારો એવો વીતરાગ પુરુષનો મૂળ માર્ગ આપ **શ્રીમદે** અનંત કૃપા કરી મને આપ્યો, તે અનંત ઉપકારનો પ્રતિઉપકાર વાળવા હું સર્વથા અસમર્થ છું ; વળી આપ શ્રીમત્ કંઇ પણ લેવાને સર્વથા નિઃસ્પૃહ છો; જેથી હું મન, વચન, કાયાની એકાગ્રતાથી આપનાં ચરણારવિન્દમા નમસ્કાર કરૂં છું

આપની પરમભકિત અને વીતરાગપુરુષ ના મૂળધર્મની ઉપાસના મારા હૃદયને વિષે ભવપર્યંત અખડ જાગ્રત રહો એટલુ માગુ છુ તે સફળ થાઓ.

ૐ શાંતિ શાતિ શાંતિ.

✦ ✦ ✦ ✦ ✦

छह सामान्य गुण

कर्ता जगत का मानता जो, "कर्म या भगवान को",
वह भूलता है लोक मे, अस्तित्व गुण के ज्ञान को,
उत्पादव्यययुत वस्तु है, फिर भी सदा ध्रुवता धरे,
अस्तित्व गुण के योग से, कोई नहि जग मे मरे। (1)

वस्तुत्व गुण के योग से, हो द्रव्य में स्व-स्वक्रिया,
स्वाधीन गुण-पर्याय का, ही पान द्रव्यों ने किया,
सामान्य और विशेष से, कर रहे निज काम को,
यों मानकर वस्तुत्व को, पाओ विमल शिवधाम को। (2)

द्रव्यत्वगुण इस वस्तु को, जग मे पलटता है सदा,
लेकिन कभी भी द्रव्य तो, तजता न लक्षण संपदा,
स्व-द्रव्य में मोक्षार्थी हो, स्वाधीन सुख लो सर्वदा,
हो नाश जिससे आजतक की, दुःखदायी भवकथा। (3)

सब द्रव्य-गुण प्रमेय से, बनते विषय हैं ज्ञान के,
रुकता न सम्यग्ज्ञान पर से, जानियों यों ध्यान से,
आत्मा अरूपी ज्ञेय निज यह, ज्ञान उसको जानता,
है स्व-पर सत्ता विश्व में, सुदृष्टि उनको जानता। (4)

यह गुण अगुरुलघु भी सदा, रखता महता है महा,
गुण द्रव्य को पररूप यह, होने न देता है अहा!,
निज-गुण-पर्याय सर्व ही, रहते सतत निज भाव में,
कर्ता न हर्ता अन्य कोई, यो लखो स्व-स्वभाव में। (5)

प्रदेशत्व गुण की शक्ति से, आकार द्रव्यो का धरे,
निजक्षेत्र मे व्यापक रहे, आकार भी स्वाधीन है,
आकार है, सब के अलग, हो लीन अपने ज्ञान मे,
जानो इन्हें सामान्य गुण, रक्खों सदा श्रद्धान मे। (6)

स्वाध्याय ही परम तप है

बार सविहम्मि य तवे अब्भंतर बाहीरे कुसलदिट्ठे,
ण वि अत्थि ण वि य होहिदि सज्झायसमं तवो कम्मं।

प्रवीण पुरुष जो श्री गणधर देव उनसे जो अवलोकन करने मे आए हुए बाह्य अभ्यन्तर बारह प्रकार के तप है उनमे स्वाध्याय समान दूसरा तप कभी हुआ नहीं, होगा नही, है नही ।

(1)

मुक्तिपुरी का ऋषभ दुलारा, सबकी आंखों का तारा,
ध्यान करत मन आनन्द पावे, ऐसा प्रभु का अतिशय न्यारा।
सात सुरों के सरगम में, प्रभु तेरे गुण को गावें रे,
सुमरन करते नाम प्रभु का, भव-भव कर्म छुड़ावे रे,
घर-घर मंगल होवे सबके, पाकर प्रभु का अमर सहारा।
अष्ट कर्म की जंजीरो को, तोड़ के मोक्ष सिधारे हो,
ज्ञानज्योति से सबको स्वामी, सम्यक् ज्योति देते हो,
मन-मन्दिर में ध्यान लगावे, लेकर तेरा नाम निराला।
अमृतमय सन्देश तुम्हारा, धर्म की ज्योति जलावेगा,
मानवता में शान्ति करके, सद्बुद्धि फैलावेगा,
भव-भव में हम शरणा पावे, जो है सबका तारणहारा।

(2)

देखो जी आदीश्वर स्वामी, कैसा ध्यान लगाया है,
कर ऊपर कर सुभग विराजै, आसन थिर ठहराया है।
जगत विभूति भूति सम तजकर, निजानन्द पद ध्याया है,
सुरभित श्वासा आशा वासा, नासा दृष्टि सुहाया है।
कंचन वरन चले मन रंच न, सुर-गिरि ज्यों थिर थाया है,
जास पास आहि मोर मृगी हरि, जाति विरोध नशाया है।
शुद्ध-उपयोग हुताशन में जिन, वसुविधि समिध जलाया है,
श्यामलि अलकावलि सिर सोहे, मानो धुआं उड़ाया है।
जीवन-मरन अलाभ-लाभ जिन, सबको नाश बनाया है,
सुर नर नाग नमहिं पद जाके, "दौल" तास जस गाया है।

(3)

तुम से लागी लगन, ले लो अपनी शरण, पारस प्यारा,
मेटो मेटो जी संकट हमारा ।
निश दिन तुमको जपूं, पर से नेहा तजूं ,
जीवन सारा, तेरे चरणो मे बीते हमारा।
अश्वसेन के राज दुलारे, वामादेवी के सुत प्राण प्यारे,
सब से नेहा तोड़ा, जग से मुंह को मोड़ा, संयम धारा।
इन्द्र और धरणेन्द्र भी आये, देवी पद्मावती मंगल गाये,
आशा पूरो सदा, दुःख नही पावे कदा, सेवक थारा।
जग के दुख की तो परवाह नही है, स्वर्ग-सुख की भी चाह नहीं है,
मेटो जामन मरण, होवे ऐसा यतन, पारस प्यारा।
लाखो बार तुम्हें शीश नवाऊं , जग के नाथ तुम्हें कैसे पाऊं,
'पंकज' व्याकुल भया, दर्शन बिन यह जिया, लागे खारा।

(4)

मेरे मन मन्दिर मे आन, पधारो महावीर भगवान।
भगवन तुम आनन्द सरोवर, रूप तुम्हारा महा मनोहर,
निशिदिन रहे तुम्हारा ध्यान, पधारो महावीर भगवान।
सुर किन्नर गणधर गुण गाते, योगी तेरा ध्यान लगाते,
गाते सब तेरा यश गान, पधारो महावीर भगवान।
जो तेरी शरणागत आया, तूने उसको पार लगाया,
तुम हो दया निधि भगवान, पधारो महावीर भगवान।
भगत जनो के कष्ट निवारें, आप तरें हमको भी तारे,
कीजे हमको आप समान, पधारो महावीर भगवान।

आये हैं हम शरण तिहारी, भक्ति हो स्वीकार हमारी,
तुम हो करुणा दयानिधान, पधारो महावीर भगवान।
रोम-रोम पर तेज तुम्हारा, भू-मण्डल तुमसे उजियारा,
रवि-शशि तुम से ज्योर्तिमान, पधारो महावीर भगवान।

(5)

निरखो अंग - अंग जिनवर के, जिनसे झलके शान्ति अपार।
चरण कमल जिनवर कहें, घूमा सब संसार,
पर क्षणभंगुर जगत में, निज आत्म तत्त्व ही सार,
याते पद्मासन विराजे जिनवर, झलके शान्ति अपार।
हस्त युगल जिनवर कहें, पर का करता होय,
ऐसी मिथ्या बुद्धि से ही, भ्रमण चतुरगति होय,
याते पद्मासन विराजे जिनवर, झलके शान्ति अपार।
लोचन द्वय जिनवर कहे, देखा सब संसार,
पर दु:ख मय गति चतुर मे, ध्रुव आत्म तत्त्व ही सार,
याते नाशा दृष्टि विराजे जिनवर, झलके शान्ति अपार।
अन्तर्मुख मुद्रा अहो, आत्म तत्त्व दरशाय,
जिनदर्शन कर निज दर्शन पा, सत्गुरु वचन सुहाय,
यातें अन्तर्दृष्टि विराजे जिनवर, झलके शान्ति अपार।

(6)

तुम्हारे दर्श बिन स्वामी, मुझे नहिं चैन पड़ती है,
छवि वैराग्य तेरी सामने, आंखों के फिरती है।
निराभूषण विगत दूषण, परम आसन मधुर भाषण,
नजर नैनों की नाशा की, अनी पर से गुजरती है।

नही कर्मो का डर मुझको, कि जब लग ध्यान चरणन में,
तेरे दर्शन से सुनते हैं, करम रेखा बदलती है।
मिले गर स्वर्ग की सम्पत्ति, अचम्भा कौन सा इसमे,
तुम्हे जो नयन भर देखे, गति दुरगति की टलती है।
हजारो मूर्तियाँ हमने बहुत - सी अन्य मत देखी,
शान्ति मूरत तुम्हारी - सी, नहीं नजरो मे चढ़ती है।
जगत सिरताज हो जिनराज, सेवक को दरश दीजे,
तुम्हारा क्या बिगडता है, मेरी बिगड़ी सुधरती है।

(7)

ससारी जीवनां भावमरणो टालवा करुणा करी,
सरिता बहावी सुधा तणी प्रभु वीर ! ते संजीवनी।
शोषाती देखी सरितने करुणाभीना हृदये करी,
मुनिकुन्द संजीवनी समयप्राभृत तणे भाजन भरी।
कुन्दकुन्द रच्युं शास्त्र, साथिया अमृते पूर्या,
ग्रथाधिराज ! तारामां भावो ब्रह्मांडना भर्या।
अहो ! वाणी तारी, प्रशमरस - भावे नितरती,
मुमुक्षुने पाती अमृतरस अंजलि भरी भरी,
अनादिनी मूर्छा, विष तणी त्वराथी उतरती,
विभावे थी थंभी, स्वरूप भणी दौड़े परिणती।
तूं छे निश्चयग्रन्थ भंग सघला, व्यवहारना भेदवा,
तू प्रज्ञाछीणी ज्ञान ने उदयनी, संधि सहु छेदवा,
साथी साधकनो तूं भानु जगनो संदेश महावीरनो,
विसामो भवक्लांतनां हृदयनो, तूं पंथ मुक्ति तणो।

सूण्ये तणे रसनिबंध शिथिल थाय,
जाण्ये तने हृदय ज्ञानी तणां जणांय,
तूं रूचतां जगतनी रुचि आलसे सौ,
तूं रीझतां सकलज्ञायकदेव रीझे।
बनावुं पत्र कुन्दननां, रत्नोनां अक्षरो लखी,
तथापि कुन्दसूत्रोनां अंकाये मूल्य ना कदी।

(8)

महिमा है अगम जिनागम की।
जाहि सुनत जड़ भिन्न पिछानी, हम चिन्मूरति आतमकी।
रागादिक दुःख-कारन जानै, त्याग बुद्धि दीनी भ्रम की।
ज्ञान-ज्योति जागी उर अन्तर, रुचि बाढ़ी पुनि शमदम की।
कर्मबंध की भई निरजरा, कारण परम्परा-क्रम की।
'भागचन्द' शिव-लालच लागौ, पहुँच नही है जहँ जम की।

(9)

सांची तो गंगा यह वीतरागवाणी,
अविछिन्न धारा निजधर्म की कहानी।
जामें अति ही विमल अगाध ज्ञानपानी,
जहाँ नहीं संशयादि पंककी निशानी।
सप्तभंग जहँ तरंग उछलत सुखदानी,
संतचित मरालवृन्द रमै नित्य ज्ञानी।
जाके अवगाहनतैं शुद्ध होय प्राणी,
'भागचन्द' निहचैं घटमाहिं या प्रमानी।

(10)

चरणों में आ पड़ा हूं, हे द्वादशांग वाणी,
मस्तक झुका रहा हूँ, हे द्वादशांग वाणी।
मिथ्यात्व को नशाया, निज तत्त्व को प्रकाशा,
आपा - पराया - भासा, हो भानु के समानी।
षट् द्रव्य को बताया, स्याद्वाद को जताया,
भवफन्द से छुडाया, सच्ची जिनेन्द्र वाणी।
रिपु चार मेरे मग मे, जंजीर डाले पग में,
ठाडे हैं मोक्ष मग मे, तकरार मोसो ठानी।
दे ज्ञान मुझको माता, इस जग से तोडूं नाता,
होवे 'सुदर्शन' साता, नहि जगमे तेरी सानी।

(11)

जिनवाणी माता, दर्शन की बलिहारियाँ।
प्रथम देव अरहन्त मनाऊं, गणधर जी को ध्याऊ,
कुन्दकुन्द आचार्य हमारे, तिनको शीश नवाऊं।
योनि लाख चौरासी मांही, घोर महादु:ख पायो,
ऐसी महिमा सुनकर माता, शरण तुम्हारी आयो।
जानै थॉको शरणा लीनो, अष्ट कर्म क्षय कीनो,
जनम-मरण मिटा के माता, मोक्ष महापद दीनों।
ठाडे श्रावक अरज करत हैं, हे जिनवाणी माता,
द्वादशांग चौदह पूरव की, करदो हमको ज्ञाता।

(12)

ऐसे मुनिवर देखे वन में, जाके राग द्वेष नहीं तन में।
ग्रीष्म ॠतु शिखर के ऊपर, मग्न रहे ध्यानन में।
चातुरमास तरुतल ठाड़े, बून्द सहे छिन - छिन में।
शीत मास दरिया के किनारे, धीरज धरें ध्यानन में।
ऐसे गुरु को मै नित प्रति ध्याऊं ,देत ढ़ोक चरणन मे।

(13)

संत साधु बन के विचरू, वह घड़ी कब आयेगी,
चल पड़ूं मैं मोंक्ष पथ मे, वह घड़ी कब आयेगी।
हाथ में पीछी कमण्डलु, ध्यान आतम राम का,
छोडकर घरबार दीक्षा, की घड़ी कब आयेगी।
आयेगा वैराग्य मुझको, इस दु:खी संसार से,
त्याग दूंगा मोह ममता, वह घड़ी कब आयेगी।
पाँच समिति तीन गुप्ति, बाईस परीषह भी सहूं,
भावना बारह जु भाऊं, वह घड़ी कब आयेगी।
बाह्य उपाधि त्याग कर, निज तत्त्व का चिंतन करूं,
निर्विकल्प होवे समाधि, वह घड़ी कब आयेगी।
भव भ्रमण का नाश होवे, इस दु:खी संसार से,
विचरूं मै निज आतमा मे, वह घड़ी कब आयेगी।

(14)

धन्य मुनीश्वर आतम हित मे छोड़ दिया परिवार,
कि तुमने छोड़ा सब घर बार।
धन छोड़ा वैभव सब छोड़ा, समझा जगत असार,
कि तुमने छोड़ दिया संसार।

काया की ममता को टारी, करते सहन परीषह भारी,
पंच महाव्रत के हो धारी, तीन रतन के हो भंडारी,
आतम स्वरूप मे झूलते करते निज आतम उद्धार,
कि तुमने छोड़ा सब घर बार।
राग द्वेष सब तुमने त्यागे, वैर विरोध हृदय से भागे,
परमातम के हो अनुरागे, वैरी कर्म पलायन भागे,
सत् सन्देश सुना भविजन को करते बेड़ा पार,
कि तुमने छोडा सब घर बार।
होय दिगम्बर वन मे विचरते, निश्चल होय ध्यान जब करते,
निजपद के आनद मे झूलते, उपशम रस की धार बरसते,
मुद्रा सौम्य निरखकर मस्तक नमता बारम्बार,
कि तुमने छोड़ा सब घर बार।

(15)

म्हारा परम दिगम्बर मुनिवर आया, सब मिल दर्शन कर लो,
बार बार आनो मुश्किल है, भाव भक्ति उर भर लो, हाँ।
हाथ कमंडलु काठ को, पीछी पंख मयूर,
विषय वास आरम्भ सब, परिग्रह से है दूर,
श्री वीतराग विज्ञानी का कोई ज्ञान हिया विच धरलो, हाँ।
एक बार कर पात्र में, अन्तराय अघ टाल,
अल्प - अशन लें हो खड़े, नीरस - सरस सम्हाल,
ऐसे मुनि मारग उत्तम धारी, तिनके चरण पकड़ लो, हाँ।
चार गति दुःख से टरी, आत्म स्वरूप को ध्याय,
पुण्य पाप से दूर दूर, ज्ञान गुफा में आय,
सौभाग्य तरण तारण मुनिवर का तारण चरण पकड़ लो, हाँ।

(16)

देखा जब अपने अन्दर में कुछ, और नहीं भगवान हूँ मैं,
पर्यय ही दीन हीन पामर, अन्दर में वैभववान हूँ मैं।
चैतन्य प्राण से जीवित नित, इन्द्रिय बल श्वाशोच्छवास नहीं,
हूँ आयु रहित नित अजर-अमर, सच्चिदानंद गुणधाम हूँ मैं।
आधीन नहीं संयोगो के, पर्यायों से अप्रभावी हूँ,
स्वाधीन अखण्ड अप्रतापी हूँ, निज से ही प्रभुतावान हूँ मैं।
सामान्य-विशेषों सहित विश्व, प्रत्यक्ष झलक जावे क्षण में,
सर्वज्ञ सर्वदर्शी आदिक, सम्यक निधियों की खान हूँ मैं।
स्वधर्मो में व्यापी विभु हूँ, और धर्म अनन्तोमय धर्मी,
नित निज स्वरूप की रचना से, सामर्थ्य से वीरजवान हूँ मैं।
तृप्ती आनन्दमयी प्रकटी, देखा जब अन्तर नाथ को मैं,
नहीं रही कामना अब कोई, बस निर्विकार निष्काम हूँ मैं।
मेरा वैभव शाश्वत अक्षुण, पर से आदान प्रदान नहीं,
त्यागोपदान शून्य निष्क्रिय, और अगुरुलघु शिवधाम हूँ मैं।

(17)

दुनियाँ में सबसे न्यारा, यह आत्मा हमारा,
सब देखन जाननहारा, यह आत्मा हमारा।
यह जले नहीं अग्नि में, भीगे न कभी पानी में,
सूखे न पवन के द्वारा, यह आत्मा हमारा।
शस्त्रो से कटे न काटा, नहिं तोड़ सके कोई भाटा,
मरता न मरी का मारा, यह आत्मा हमारा।
माँ बाप सुता सुत नारी, झुठे झगड़े संसारी,
नहिं कोई देत सहारा, यह आत्मा हमारा।

मत फँसे मोह ममता मे, 'मक्खन' आजा आपा मे,
तन धन कुछ नही तुम्हारा, यह आत्मा हमारा।

(18)

मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ।
मै हूँ अपने में स्वयं पूर्ण, पर की मुझमे कुछ गन्ध नहीं,
मै अरस अरूपी अस्पर्शी, पर से कुछ भी सम्बन्ध नहीं।
मैं रंग-रागसे भिन्न भेद से, भी मै भिन्न निराला हूँ,
मै हूँ अखन्ड चैतन्य पिण्ड, निज रस में रमने वाला हूँ।
मैं ही मेरा कर्त्ता धर्ता, मुझमे पर का कुछ काम नही,
मै मुझमें रमने वाला हूँ, पर में मेरा विश्राम नही।
मै शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध एक, पर परणति से अप्रभावी हूँ,
आत्मानुभूति से प्राप्त तत्व, मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ।

(19)

जो जो देखी वीतराग ने, सो सो होसी वीरा रे,
अनहोनी होसी नही क्यो जग में, काहे होत अधीर रे।
समय एक बढै नहि घटसी, जो सुख-दु ख की पीरा रे,
तू क्यो सोच करै मन मूरख, होय वज्र ज्यों हीरा रे।
लगै न तीर कमान बान कहुँ, मार सकै नही मीरा रे,
तू सम्हारि पौरुष बल अपनो, सुख अनन्त तो तीरा रे।
निश्चय ध्यान धरहु वा प्रभु को, जो टारे भव भीरा रे,
'भैया' चेत धरम निज अपनो, जो तारैं भव नीरा रे।

(20)

स्वत परिणमति वस्तु के क्यों करता बनते जाते हो,
कुछ समझ नही आती तुझको, नि.सत्व बने ही जाते हो।
अरे कौन निकम्मा जग मे है, जो पर का करने जाता हो,
सब अपने अन्दर रमते है, तब किस विधि करण रचाते हो।
वस्तु की मालिक वस्तु है, जो मालिक है वह कर्त्ता है,
फिर मालिक के मालिक बनकर, क्यो नीति-न्याय गमाते हो।
सत् सब स्वयं परिणमता है, वह नहीं किसी की सुनता है,
यह माने बिन कल्याण नहीं, कोई कैसे ही कुछ कहता हो।

(21)

हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम, ज्ञाता द्रष्टा आतम राम।
मै वह हूँ जो है भगवान, जो मैं हूँ वह हैं भगवान,
अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यह रागवितान।
मम् स्वरूप है सिद्ध समान, अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान,
किन्तु आशवश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अजान।
सुख-दुख दाता कोई न आन, मोह राग रुप दुखकी खान,
निज को निज परको परजान, फिर दुख का नहिं लेश निदान।
जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम, विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम,
राग त्यागि पहुँचूँ निजधाम, आकुलता का फिर क्या काम।
होता स्वयं जगत परिणाम, मैं जग का करता क्या काम,
दूर हटो परकृत परिणाम, 'सहजानन्द' रहूँ अभिराम।

(1)

હે નેમી જિનેશ્વરજી, કાહે કસૂર પૈ ચલ દિયે રથ કો મોર.

કાહે કો દુલહા કા રૂપ બનાયા; કાહે બરાતિન કો જોર,
કાહે કો તોરણ પૈ લે સંગ આયે, ખેંચી ક્યોં રથકી ડોર.

ક્યા હૈ કિસીને બડા બોલ બોલા, ક્યા ગૂઢ બાતે હૈં ઔર,
પશુઓં ને ઐસા કિયા કૌન જાદૂ, રૂઠે જો સુન કર શોર.

નવ ભવકી સાથિન હૂ પ્યારે સાવરિયા, ફિર ક્યા હો ઐસે કઠોર,
કાહે કો મુનિ પદ ધારા દિગંબર, ડારે ક્યોં ભૂષણ તોર.

ભવ ભવ યહી એક સૌભાગ્ય ચાહું દીજે ચરણ મેં સુઠોર,
આવાગમન સે મિલે શીઘ્ર મુક્તિ, યે હી અરજ કર જોર.

(2)

કહે રાજુલદે નાર, જરા મેરી ભી પુકાર,
સુનો સુનો ભરતાર જાતે હો કહાં રથ મોડકે.

ઓ! માઝી મુઝે અધ બીચમેં, કહો કૈસે તજી જગ કીચમેં,
મેરી નૈયાંકા પતવાર, ખેવો જીવન કે આધાર,
સુનો સુનો ભરતાર જાતે હો કહાં રથ મોડકે.

ઓ! સ્વામી પશુઓંકી પુકાર પર, હુવે ત્યાગી દયા ચિત ધાર કર,
મૈં ભી જગકા જૂઠા પ્યાર, આઈ તજકર સબ પરિવાર,
સુનો સુનો ભરતાર જાતે હો કહાં રથ મોડકે.

શ્રુત આવાગમન કા 'સૌભાગ્ય' સે,ભેટું ભવફંદ તેરે સુજાપસે,
કરું આતમકા ઉદ્ધાર, પાઉં સિદ્ધાસન પદ સાર,
સુનો સુનો ભરતાર, જાતે હો કહાં રથ મોડકે.

(3)

પ્રભુની વાણી જોર રસાળ, મનડું સાંભળવા તલસે.
સજલ જલદ જિમ ગાજતો, જાણું વરસે અમૃતધાર.
સાંભળતાં લાગે નહિ, ખીણ ભુખને તરસ લગાર.
તિર્યંચ મનુષ ને દેવતા સહુ, સમજે નિજ નિજ વાણ.
જોજન ખેત્રે વિસ્તરે, નય ઉપનય રતનની ખાણ.
બેસે હરિ મૃગ એકઠા, ઉંદર માંજાર ના બાળ.
મોહ્યા પ્રભુની વાણીયે, કો ન કરે એહની આળ.
સહસ વરસ જો નીગમે, તોહે તૃપ્તિ ન પામે મન્ન.
સાતાયે સહુ જીવના, રોમાચિત હુવે તન્ન.
વાણી સીમંધરજિણંદની, શિવરમણીની દાતાર.
વીતરાગી જીણંદજીનો, પ્રભુ હોજો જય જયકાર.

(4)

તન મન ફૂલા દર્શન પા, નષ્ટ હુઆ દુખ સારા,
સભી સુખ પાયા, પાયા સભી સુખ પાયા.
પ્યાસે પ્યાસે નૈના કબસે તરસ રહે, તરસ રહે,
દર્શન જલ પાનેં કો રો રો બરસ રહે, બરસ રહે,
પાવન શુભ દિન પાયા રે, પલ પલ રૂપ નિહારૂં,
પ્રભુ મન ભાયા, પાયા, સભી સુખ પાયા.

ઇન્દ્રાદિક પદવી કી મુઝકો ચાહ નહી, ચાહ નહીં,
જગતી કે વૈભવ લખ પરકી દાહ નહીં, દાહ નહીં,
નિજાનંદ પદ પાઊ રે, એક યહી વર દીજો,
પ્રભુ ચિત્ત ચાયા, પાયા, સભી સુખ પાયા.

પ્રભુ ધરમ જાતિ કા મૈ ફિર દાસ રહૂ, દાસ રહૂં,
અટલ રહૂં મુક્તિ મે તેરે પાસ રહું, પાસ રહૂં,
સુખ સૌભાગ્ય બઢાઊ રે તવ પદ પાકર કરલૂં,
સફલ સુ કાયા, પાયા, સભી સુખ પાયા.

(5)

આજ મારા હૃદયમા, આનદ સાગર ઊછળે,
જિનચન્દ્રના દર્શન વડે, સતાપ સવિ સ્હેજે ટળે.

કળિકાળમા જિનદેવનું, દર્શન જીવન આધાર છે,
પામશે જે શુદ્ધ ભાવે, તરી જશે સંસાર તે.

ભવવને ભમતા થકા, ભૂલા પડેલા માર્ગમાં,
દર્શનરૂપી દીપક લઈ, જાશુ અમે અપવર્ગમાં.

રામનો સંગમ થયે, જેમ હર્ષ પામે જાનકી,
તેવી જ રીતે ભવિકને, જિનદેવના દર્શનથકી.

શ્રીગુરુ વચનામૃત સુણી, જાણ્યુ અમે જિનદર્શને,
આત્મ જાગે, પાપ ભાગે, સિદ્ધની પદવી મળે.

(6)

સીમંધર મુખથી ફૂલડા ખરે,
એની કુંદ કુંદ ગૂંથે માળ રે,
જિનજીની વાણી ભલી રે.

વાણી ભલી મન લાગે રળી,
જેમાં સાર-સમય શિરતાજ રે,
જિનજીની વાણી ભલી રે.

ગુંથ્યાં પાહુડ ને ગૂથ્યુ પચાસ્તિ,
ગુંથ્યું પ્રવચનસાર રે,
જિનજીની વાણી ભલી રે.

ગુથ્યુ નિયમસાર, ગુથ્યું રયણસાર,
ગુથ્યોં સમયનો સાર રે,
જિનજીની વાણી ભલી રે.

સ્યાદ્‌વાદ કેરી સુવાસે ભરેલો,
જિનજીનો ૐકારનાદ રે,
જિનજીની વાણી ભલી રે.

વદું જિનેશ્વર, વદું હું કુદકુંદ,
વંદું એ ૐકારનાદ રે,
જિનજીની વાણી ભલી રે.

હૈડે હજો, મારા ભાવે હજો,
મારા ધ્યાને હજો જિનવાણ રે,
જિનજીની વાણી ભલી રે.

જિનેશ્વરદેવની વાણીના વાયરા,
વાજો મને દિનરાત રે,
જિનજીની વાણી ભલી રે.

(7)

સુખશાન્તિ પ્રદાતા, જગના ત્રાતા, કુંદકુદ મહારાજ;
જનભ્રાંતિ વિધાતા, તત્વોના જ્ઞાતા નમન કરૂ છુ આજ,

જડતાનો આ ધરણી ઉપર, હતો પ્રબળ અધિકાર;
કર્યો ઉપકાર અપાર પ્રભુ! તેં, રચીને ગ્રંથ ઉદાર રે.

વરસાવી નિજ વચન સુધારસ, કર્યો સુશીતલ લોક;
સમયસારનુ પાન કરીને, ગયો માનસિક શોક રે.

તારા ગ્રંથોનું મનન કરીને, પામુ અલૌકિક ભાન;
ક્ષણે ક્ષણે હું જ્ઞાયક સમરૂ, પામું કેવળજ્ઞાન રે.

તારૂ હૃદય પ્રભુ! જ્ઞાન - સમતાનુ, રહ્યું નિરંતર ધામ;
ઉપકારો ની વિમલ યાદીમાં, લાઓ વાર પ્રણામ રે.

(8)

જંગલ વસાવ્યું રે જોગીએ, તજી તનડાની આશજી,
વાત ન ગમે રે આ વિશ્વની, આઠે પહોર ઉદાસ જી.

શેજ પલંગ પર પોઢતા, મંદીર ઝરૂખા માંયજી,
તેને નહિ તૃણ સાથરો, રહેતા તરૂતલ છાયજી.

સાલ દુશાલા ઓઢતા, ઝીણા જરકશી જામજી,
તેણે રે ન રાખ્યુ તૃણ વસ્ત્રનુ, સહે શિરસીત ઘામજી.

હાંજી કહેતાં હજાર ઉઠંતા, ચાલતાં લશ્કર લાવજી,
તે નર ચાલ્યા રે એકલા, નહિ પેંજાર પાવજી.

ભલો રે ત્યાગ રાજા રામનો, ત્યાગી અનેક નારજી,
મંદીર ઝરૂખા મેલી કરી, આસન કીધલા દૂરજી.

ધન્ય ધન્ય શ્રીસુકુમાર મુની, ગ્રહયુ સ્વરૂપ નિગ્રંથજી,
રાજ સાજ સુખ પરીહરી, વેગે ચાલીયા વનજી.

એ વૈરાગ વંતને જાઉં વારણે, બીજાં ગયાંરે અનેકજી,
ધન્ય રે જનો એ અવનીવિષે, તેને કરૂં હું નમનજી.

(9)

જાગો જોગી અલખ સ્વરૂપી, પૂર્ણાનન્દવિલાસી;
નિજપદમાંહિ વાસ તુમારા, જ્ઞાતાજ્ઞેય પ્રકાશી,
ખેલો આતમરે, અવસર આવ્યો સારો;
જીનજી તુ મને પ્યારો, ખેલો આતમરે

ચિદ્ઘન શુદ્ધ સ્વરૂપે સોહે, મુનિજનનાં મન મોહે;
દિનમણિ ત્રણભુવનમા તુ છે, પોતે પોતાને બોહે.

અન્તર ધન પરખીલે ! તારૂં, સારામાં જે સારૂં;
તન્મય વિશ્વાસી થા તેનો, પ્યારામા જે પ્યારૂં

ભુલી દુનિયાના ડહાપણને, વળજે આતમવાટે,
ઉંઘીશ નહિ તુ અગમપન્થમા, માલ છે માથા સાટે

હાથે નહી તે સાથે કરવુ, અદ્ભૂત એહ તમાસા;
પામ્યા અનન્તા પામે તેને, તે પદના તુ પ્યાસા.

ચિન્તામણિ નિર્ઘનના હાથે, તેતો કબહુ ન ચડશે;
માનો મનમા જે તે આવ્યું, પરભવ માલુમ પડશે

ચઉટામા મીસરી વેરાણી, કીડી કળાથી ખાવે;
કુંજર તેને ગ્રહી શકે નહિ, યોગ્યતાએ સહુ પાવે.

જેના માથે સદ્‌ગુરૂ છે, તે જગમેં ઉજીયારો;
નિજ સ્વરૂપે આત્મ ઉજાગર, સદ્‌ગુરૂ તરે ને તારે.

(10)

પ્રભુ મેરે! તૂં સબ વાતે પૂરા,
પર કી આશ કહા કરે પ્રીતમ ! એ કિણ વાતે અધૂરા.

પર વશ વસત લહત પરતક્ષ દુઃખ, સબહી બાસે સનૂરા;
નિજ ઘર આપ સંભાર સંપદા, મત મન હોય સનૂરા.

પરસંગ ત્યાગ લાગ નિજ રંગે, આનંદ વેલી અંકૂરા;
નિજ અનુભવ રસ લાગે મીઠા, જ્યું ઘેવરમેં છૂરા.

અપને ખ્યાલ પલકમેં ખેલે, કરે શત્રુકા ચૂરા;
સહજાનંદ અચલ સુખ પાવે, ધૂરે જગ જીવ નૂરા.

(11)

એસા સ્વરૂપ વિચારો હસા, ગુરૂગમ શૈલી ધારીરે.
પુદ્‌ગલ રૂપાદિકથી ન્યારો, નિર્મળ સ્ફટિકસમાનોરે;
નિજ સત્તા ત્રિહુકાલે અખણ્ડિત, કબહુ રહે નહિ છાનોરે.

ભેદજ્ઞાન સૂર ઉદયે જાગી, આતમધંધે લાગોરે;
સ્થિરદષ્ટિ સત્તાનિજ ધ્યાયી, પરપરિણમતા ત્યાગો રે.

કર્મબંધ રાગાદિક વારી, શકિત શુદ્ધ સમારીરે;
ઝીલો સમતાગગાજલમેં, પામી ધ્રુવકી તારીરે.

નિજગુણ રમતો રામ ભયો જબ, આતમરામ કહાયોરે;
શ્રીસદ્ગુરુ કહે શોધો ઘટમા, નિજમાં નિજ પરખાયોરે.

(12)

સસારસાગર તારવા જિનવાણી છે નૌકા ભલી,
જ્ઞાની સુકાની મલ્યા વિના એ નાવ પણ તારે નહીં;
આ કાળમા શુદ્ધાત્મજ્ઞાની સુકાની બહુ બહુ દોહ્યલો,
મુજ પુણ્યરાશિ ફલ્યો અહો! ગુરુ કહાન તું નાવિક મલ્યો.

અહો! ભક્ત ચિદાત્માના, સીમધર - વીર - કુંદના!
બાહ્યાંતર વિભવો તારા, તારે નાવ મુમુક્ષુનાં.

સદા દષ્ટિ તારી વિમળ નિજ ચૈતન્ય નીરખે,
અને જ્ઞપ્તિમાહી દરવ - ગુણ - પર્યાય વિલસે;
નિજાલંબીભાવે પરિણતિ સ્વરૂપે જઇ ભળે,
નિમિત્તો વહેવારો ચિદઘન વિષે કાંઇ ન મળે.

હૈયુ સત સત, જ્ઞાન જ્ઞાન ધબકે ને વજ્રવાણી છૂટે,
જે વજ્રે સુમુમુક્ષુ સત્ત્વ ઝળકે; પરદ્રવ્ય નાતો તૂટે;
રાગદ્વેષ રુચે ન, જપ ન વળે ભાવેંદ્રિમાં - અંશમાં,
ટકોત્કીર્ણ અકંપ જ્ઞાન મહિમા હૃદયે રહે સર્વદા.

નિત્યે સુધાઝરણ ચન્દ્ર! તને નમું હું,
કરુણા અકારણ સમુદ્ર; તને નમું હું;
હે જ્ઞાનપોષક સુમેઘ! તને નમું હું,
આ દાસના જીવનશિલ્પી! તને નમું હું,

ઊંડી ઊંડી, ઊંડેથી સુખનિધિ સતના વાયુ નિત્યે વહતી,
વાણી ચિન્મૂર્તિ! તારી ઉર-અનુભવના સૂક્ષ્મ ભાવે ભરેલી;
ભાવો ઊંડા વિચારી, અભિનવ મહિમા ચિત્તમા લાવી લાવી,
ખોયેલું રત્ન પામું, - મનરથ મનનો; પુરજો શક્તિશાળી!

(13)

ગુરુદેવ! તારા ચરણમા ફરી ફરી કરું હું વંદના,
સ્થાપી અનંતાનંત તુજ ઉપકાર મારા હૃદયમાં.

કરીને કૃપાદ્રષ્ટિ, પ્રભુ! નિત રાખજો તુમ ચરણમાં,
રે! ધન્ય છે એ જીવન જેવી તે શીતળ તુજ છાંયમા.

ગુરુદેવ! અવિનય કંઇ થયો, અપરાધ કંઇ પણ જે થયા,
કરજો ક્ષમા અમ બાળને, એ દીનભાવે યાચના.

મન વચન-કાય થકી થયા જાણ્યે - અજાણ્યે દોષ જે,
કરજો ક્ષમા સૌ દોષની, હે નાથ! વિનવું આપને.

તારી ચરણસેવા થકી સૌ દોષ સહેજે જાય છે,
ક્રોધાદિ ભાવ દૂરે થઇ ભાવો ક્ષમાદિક થાય છે.

ગુરુવર! નમું હું આપને, અમ જીવનના આધારને,
વૈરાગ્યપૂરિત જ્ઞાન - અમૃત સીંચનારા મેઘને.

મિથ્યાત્વભાવે મૂઢ થઇ નિજતત્વ નહિ જાણ્યું અરે!
આપી ક્ષમા એ દોષની આ પરિભ્રમણ ટાળો હવે.

સમ્યક્ત્વ - આદિક ધર્મ પામું, તુજ ચરણ-આશ્રય વડે,
જય જય થજો પ્રભુ! આપનો, સૌ ભક્ત શાસનના ચહે.

(14)

અહો! અહો! શ્રી સદ્ગુરુ, કરુણાસિંધુ અપાર;
આ પામર પર પ્રભુ કર્યો અહો! અહો! ઉપકાર.

શું પ્રભુ ચરણ કને ધરું, આત્માથી સૌ હીન;
તે તો પ્રભુએ આપિયો, વર્તું ચરણાધીન.

આ દેહાદિ આજથી, વર્તો પ્રભુ આધીન;
દાસ દાસ હું દાસ છું, આપ પ્રભુનો દીન.
ષટ્ સ્થાનક સમજાવીને, ભિન્ન બતાવ્યો આપ;
મ્યાનથકી તરવારવત્, એ ઉપકાર અમાપ.

જે સ્વરૂપ સમજ્યા વિના પામ્યો દુઃખ અનંત ;
સમજાવ્યું તે પદ નમું , શ્રી સદ્‌ગુરુ ભગવંત.
પરમ પુરૂષ પ્રભુ સદ્‌ગુરુ , પરમજ્ઞાન સુખધામ;
જેણે આપ્યું ભાન નિજ, તેને સદા પ્રણામ.
દેહ છતાં જેની દશા, વર્ત્તે દેહાતીત;
તે જ્ઞાનીના ચરણમાં, હો વંદન અગણિત.

✦✦✦✦✦

સ્વાધ્યાય પદ્ય

હુ એક શુદ્ધ સદા અરૂપી, જ્ઞાન દર્શનમય ખરે,
કઈ અન્ય તે મારૂ જરી, પરમાણુ માત્ર નથી અરે. (1)

છે ચેતનાગુણ, ગંધ-રૂપ-રસ-શબ્દ વ્યક્તિ ન જીવને,
વળી લિંગગ્રહણ નથી અને સસ્થાન ભાખ્યુ ન તેહને. (2)

જે ચેતનાગુણ, અરસરૂપ, અગધ શબ્દ અવ્યકત છે,
નિર્દિષ્ટ નહિ સંસ્થાન, ઈન્દ્રિયગ્રાહ્ય નહિ, તે જીવ છે. (3)

જીવ ચેતનાગુણ, અરસરૂપ, અગધશબ્દ અવ્યકત છે,
વણી લિંગગ્રહણ વિહીન છે, સસ્થાન ભાખ્યું ન તેહ ને. (4)

મારો સુશાસ્વત એક દર્શન જ્ઞાન લક્ષણ જીવ છે,
બાકી બધા સંયોગ લક્ષણ ભાવ મુજ થી બાહ્ય છે. (5)

જીવ ચેતનાગુણ, શબ્દ-રસ-રૂપ-ગધ વ્યક્તિ વિહીન છે,
નિર્દિષ્ટ નહીં સંસ્થાન જીવનું, ગ્રહણલિંગ થકી નહીં. (6)

છું એક, શુદ્ધ, મમત્વ હીન હું, જ્ઞાન દર્શન પૂર્ણ છું ,
એમા રહી સ્થિત, લીન એમા, શીઘ્ર આ સૌ ક્ષય કરૂં. (7)

નથી અપ્રમત્ત કે પ્રમત્ત નથી, જે એક જ્ઞાયકભાવ છે,
એ રીત શુદ્ધ કથાય, ને જે જ્ઞાત તે તો તે જ છે. (8)

જ્યમ લોહનું ત્યમ કનકનું જંજીર જકડે પુરૂષને,
એવી રીતે શુભ કે અશુભ કૃત કર્મ બાંધે જીવને. (9)

સુની ઘાતિકર્મ વિહીન નું, સુખ સૌ સુખે ઉત્કૃષ્ટ છે,
શ્રદ્ધે ન તેહ અભવ્ય છે, ને ભવ્ય તે સંમત કરે. (10)

જે જાણતો અર્હંત ને, ગુણ દ્રવ્ય ને પર્યયપણે,
તે જીવ જાણે આત્મને, તસુ મોહ પામે લય ખરે. (11)

શાસ્ત્રોં વળે પ્રત્યક્ષ આદિથી, જાણતો જે અર્થને,
તસુ મોહ પામે નાશ નિશ્ચય, શાસ્ત્ર સમધ્યયનીય છે. (12)

જેવા જીવો છે સિદ્ધિગત, તેવા જીવો સંસારી છે,
જેથી જનમ મરણાદિ હીનને, અષ્ટ ગુણ સંયુકત છે. (13)

અશરીર ને અવિનાશ છે, નિર્મળ, અતીન્દ્રિય શુદ્ધ છે,
જ્યમ લોક અગ્રે સિદ્ધ, તે રીત જાણ સૌ સંસારીને. (14)

મૂઢ જહીં વિશ્વસ્ત છે, તત્સમ નહીં ભયસ્થાન,
જેથી ડરે તેનાં સમુ, કોઈ ન નિર્ભય ધામ. (15)

ઈન્દ્રિય સર્વ નીરોધી ને, મન કરીને સ્થિરરૂપ,
ક્ષણભર જોતાં જે દિસે, તે પરમાત્મ સ્વરૂપ. (16)

દ્રશ્યમાન આ જડ બધાં, ચેતન છે નહીં દ્રષ્ટ,
રોષ કરૂ ક્યા? તોષ કંયા? ધરૂં ભાવ મધ્યસ્થ. (17)

અનાત્મદર્શી ગામ વા વનમાં કરે નિવાસ,
નિશ્ચય શુદ્ધાત્મામહીં, આત્મદર્શી નો વાસ. (18)

બહુ સૂણે ભાખે ભલે, દેહ ભિન્ન ની વાત,
પણ તેને નહી અનુભવે, ત્યા લગી નહીં શિવલાભ. (19)

દિશા - દેશ થી આવીને, પક્ષી વૃક્ષે વસન્ત,
પ્રાતઃ થતા નિજ કાર્યવશ, વિધ વિધ દેશ ઉડન્ત. (20)

દેખે વિપત્તિ અન્ય ની, નિજની દેખે નાહિ,
બળતાં પશુઓ વન વિષે, દેખે તરૂ પર જાઈ. (21)

નિજ અનુભવથી પ્રગટ જે, નિત્ય શરીર પ્રમાણ,
લોકાલોક વિલોકતો, આત્મા અતિ સુખવાન. (22)

ક્યાં ભીતિ જ્યાં અમર હુ ? ક્યાં પીડા વષરોગ ?
બાલ, યુવા, નહીં વૃદ્ધ હુ, એ સહુ પુદ્‌ગલ જોગ. (23)

ચાર ગતિ દુઃખ થી ડરે, તો તજ સૌ પરભાવ,
શુદ્ધાતમ ચિંતન કરી, લે શિવસુખ નો લાભ. (24)

નિજરૂપ જો નથી જાણતો, કરે પુણ્ય બસ પુણ્ય,
ભમે તોય સંસાર મા, શિવસુખ કદી ન થાય. (25)

ગૃહકામ કરતાં છતાં, હેયા હેય નું જ્ઞાન,
ધ્યાવે સદા જીનેશ પદ, શીઘ્ર લહે નિર્વાણ. (26)

પુણ્યે પામે સ્વર્ગ જીવ, પાપે નરક નિવાસ,
બે તજી જાણે આત્મ ને, તે પામે શિવવાસ. (27)

કોણ કોની સમતા કરે, સેવે પૂજે કોણ,
કોની સ્પર્શાસ્પર્શતા, ઠગે કોઈને કોણ ? (28)

કોણ કોની મૈત્રી કરે, કોની સાથે ક્લેશ,
જ્યાં દેખું ત્યાં સર્વ જીવ, શુદ્ધ બુદ્ધ જ્ઞાનેશ. (29)

તન મંદિર માં દેવ જીન, જનદેરે દેખંત,
હાસ્ય મને દેખાય આ, પ્રભુ ભિક્ષાર્થે ભમંત. (30)

જેમ રમતું મન વિષય માં, તેમ જો આત્મે લીન,
શીઘ્ર મળે નિર્વાણ પદ, ધરે ન દેહ નવીન. (31)

ધ્યાન વળે અભ્યંતરે, દેખે જે અશરીર,
શરમજનક જન્મો ટળે, પીએ ન જનની ક્ષીર. (32)

પાપરૂપને પાપ તો જાણે જગ સહુ કોઈ,
પુણ્ય તત્વ પણ પાપ છે, કહે અનુભવી બુધ કોઈ. (33)

જે જાણે શુદ્ધાત્મને, અશુચિ દેહ થી ભિન્ન,
તે જ્ઞાતા સૌ શાસ્ત્રનો, શાશ્વત સુખમાં લીન. (34)

સર્વ જીવ છે જ્ઞાનમય, એવો જે સમભાવ,
તે સામાયિક જાણવું, ભાખે જીનવરરાવ. (35)

આત્મા તે અર્હન્ત છે, સિદ્ધ નિશ્ચયે એજ,
આચારજ ઉવઝાય ને, સાધુ નિશ્ચય તેજ. (36)

જે સિદ્ધયા ને સિદ્ધશે, સિદ્ધ થતાં ભગવાન,
તે આત્મ દર્શન થકી, એમ જાણ નિભ્રાન્ત. (37)

ત્યાગ વિરાગ ન ચિત્ત માં, થાય ન તેને જ્ઞાન,
અટકે ત્યાગ વિરાગ માં, તો ભૂલે નિજ ભાન. (38)

જ્યાં જ્યાં જે જે યોગ્ય છે, તહાં સમજવું તેહ,
ત્યાં ત્યા તે તે આચરે, આત્માર્થી જન એહ. (39)

પ્રત્યક્ષ સદ્ગુરૂ યોગ થી, સ્વચ્છદ તે રોકાય,
અન્ય ઉપાય કર્યા થકી, પ્રાયે બમણો થાય. (40)

એક હોય ત્રળ કાળમાં, પરમારથ નો પંથ,
પ્રેરે તે પરમારથ ને, તે વ્યવહાર સમંત. (41)

કષાય ની ઉપશાતતા, માત્ર મોક્ષ અભિલાષ,
ભવે ખેદ પ્રાણી દયા, ત્યાં આત્માર્થ નિવાસ. (42)

ભાસ્યો દેહાધ્યાસ થી, આત્મા દેહ સમાન,
પણ તે બન્નેં ભિન્ન છે, પ્રગટ લક્ષણે ભાન. (43)

સર્વ અવસ્થા ને વિષે, ન્યારો સદા જણાય,
પ્રગટરૂપ ચૈતન્યમય, એ એંધાણ સદાય. (44)

જડ ચેતન નો ભિન્ન છે, કેવળ પ્રગટ સ્વભાવ,
એક પણું પામે નહીં, ત્રણે કાળ દ્વય ભાવ. (45)

ક્યારે કોઈ વસ્તુ નો, કેવલ હોય ન નાશ,
ચેતન પામે નાશ તો, કેમાં ભળે તપાસ. (46)

જે જે કારણ બંધનાં, તેહ બંધ નો પંથ,
તે કારણ છેદક દશા, મોક્ષ પંથ ભવ અંત. (47)

કોટિ વર્ષ નું સ્વપ્ન પણ, જાગૃત થતાં સમાય,
તેમ વિભાવ અનાદિ નો, જ્ઞાન થતાં દૂર થાય. (48)

શુદ્ધ બુદ્ધ ચૈતન્યઘન, સ્વય જ્યોતિ સુખધામ,
બીજું કહીએ કેટલું, કર વિચાર તો પામ. (49)

આત્મભ્રાંતિ સમ રોગ નહીં, સદ્‌ગુરૂવૈદ્ય સુજાણ,
ગુરુ આજ્ઞા સમ પથ્ય નહીં, ઔષધ વિચાર ધ્યાન. (50)

સર્વ જીવ છે સિદ્ધ સમ, જે સમજે તે થાય,
સદ્‌ગુરૂ આજ્ઞા જીન દશા, નિમિત કારણ માંય. (51)

✦ ✦ ✦ ✦ ✦

"दौल" समज सुन चेत सयाने,
काल वृथा मत खोवे;
यह नरभव फिर मिलन कठिन है,
जों सम्यक् नहीं होवै। (1)

मुनिवृत धार अनंत बार, ग्रीवक उपजायो,
पै निज आत्म ज्ञान बिना, सुख लेश न पायो। (2)

यह मानुष पर्याय, सुकुल, सुनिवो जिनवानी;
इह विधि गये न मिले, सुमणि ज्यों उदधि समानी। (3)

पुण्य पाप फल माहि, हरख विलखौ मत भाई,
यह पुदगल परजाय, उपजि विनसै फिर थाई। (4)

लाख बात की बात यही, निश्चय उरलाओ,
तोरि सकल जग दंद फद, नित आतम ध्याओ (5)

इमि जानि आलस हानि,
साहस ठानि यह सीख आदरो;
जबलौं न रोग जरा गहे,
तबलौं जटिति निज हित करो। (6)

उपादान निज शक्ति है, जिय को मूल स्वभाव,
है निमित परयोगतें, बन्यो अनादि बनाव। (7)

उपादान सु अनादिको, उलट रह्यो जगमाहिं,
सूलटत ही सूधे चलें, सिद्धलोक को जाहिं। (8)

उपादान कहे वह बली, जाको नाश न होय,
जो उपजत विनशत रहैं, बली कहाँ तें सोय। (9)

उपादान अरु निमित ये, सब जीवन पै वीर,
जो निजशक्ति संभार ही, सो पहुंचे भवतीर। (10)

चेतना का वास है दुर्गन्धमय इस देह मे,
शुद्धातमा का वास है इस मलिन कारागेह में,
इस देह के संयोग मे जो वस्तु पलभर आयगी,
वह भी मलिन मल-मूत्रमय दुर्गन्धमय हो जायगी।

किन्तु रह इस देह में निर्मल रहा जो आतमा,
वह ज्ञेय है श्रद्धेय है बस ध्येय भी वह आतमा,
उस आतमा की साधना ही भावना का सार है,
ध्रुवधाम की आराधना आराधना का सार है।

स्वाध्याय गद्य

१. जो सकल निवारण अखण्ड, एक, प्रत्यक्ष -प्रतिभासमय, अविनश्वर और शुद्ध पारिणामिक लक्षणवाला निज परमात्मद्रव्य है, वही मैं हूँ अपितु खण्ड ज्ञान रूप मैं नहीं हूं।

२. जो देह में रहता है, तो भी देह से जुदा है, अशुचिमय देह को वह देव छूता नहीं, वही आत्मदेव उपादेय है।

३. मैं एक चैतन्य मयी हूं और कुछ अन्यरुप कभी नहीं होता हूं। मेरा किसी भी पदार्थ से कोई संबंध नहीं है। यह मेरा पक्ष परम मजबूत ऐसा ही है।

૧. જેમ દીપક વડે પ્રકાશવામાં આવતાં, ઘટાદિક પદાર્થો દીપક ના પ્રકાશ પણાને જ જાહેર કરે છે, ઘટાદિપણાને નહીં, તેમ આત્માવડે ચેતવામા આવતા રાગાદિક અર્થાત જ્ઞાનમા જ્ઞેયરુપે જણાંતા રાગાદિ ભાવો આત્માના ચેતક પણાને જ જાહેર કરે છે, રાગાદિપણાં ને નહીં.

૨. જેમ કમલ પત્ર અને પાણી સદાય જુદા જ રહે છે, તેમ શરીર ના સંયોગ મા રહેલો આ આત્મા પોતાનાં સ્વભાવ થી નિર્મલ છે અને શરીર, કર્મો તથા રાગાદિ મલ થી સદા અલિપ્ત રહે છે.

૩. જે સુબુદ્ધિઓને તેમ જ કુબુદ્ધિઓને પ્રથમથી જ શુદ્ધતા છે, તેમના માં કાંઈ પણ ભેદ હું કઈ નય થી જાણું ?

૪ જેવી રીતે જ્યાં પુષ્પ નાં યોગથી સ્ફટિક મણિમાં જે લાલિમાનો પ્રતિભાસ થાય છે, તે ક્ષણિક છે, પણ સ્ફટિક નું સ્વરૂપ નથી, તેવી જ રીતે જીવાદિમાં, નવ તત્વો માં, જે જીવ નો પ્રતિભાસ થાય છે, તે વાસ્તવિક નથી, પરંતુ કેવલ વ્યવહાર દ્રષ્ટિ થી છે - શુદ્ધ દ્રષ્ટિ થી નથી. શુદ્ધ દ્રષ્ટિ થી તો જીવતત્વ અદ્વૈતરૂપ જ છે. તેમાં આ નવ અવસ્થાઓનો પ્રતિભાસ પ્રતીત થતો નથી.

૫. આદિ - મધ્ય - અતરહિત, શુદ્ધ - બુદ્ધ એક સ્વભાવ પરમાત્મા માં, સકલ - નિર્મલ કેવલજ્ઞાનરૂપ નેત્ર વડે, અરીસા માં પ્રતિબિમ્બો ની પેઠે, શુદ્ધાત્મા આદિ પદાર્થો આલોકિત થાય છે - દેખાય છે - જણાય છે - પરિચ્છિન્ન થાય છે, તેથી તે કારણે તેજ (શુદ્ધાત્માજ) નિશ્ચય લોક છે અથવા તે નિશ્ચય લોક નામના પોતાના શુદ્ધ પરમાત્મા માં અવલોકન તે નિશ્ચય લોક છે.

૬. જેમ લાલફૂલના નિમિતે સ્ફટિક લાલ રગરૂપે પરિણમે છે, પરંતુ તે લાલ રંગ સ્ફટિક નો નિજ ભાવ નથી. સ્ફટિક સ્વચ્છતારૂપ પોતાના શ્વેત વર્ણથી વિરાજમાન છે. લાલરંગ છે તે સ્વરૂપમાં પેઠા સિવાય ઉપર ઉપર જ ઝલકમાત્ર દેખાય છે, ત્યાં રત્ન નો પારખુ ઝવેરી તો એમજ જાણે છે અને અપારખુ પુરૂષને સત્યરૂપ લાલ મણી ની જેમ લાલરંગ રૂપ જ પ્રતિભાસે છે, તેવી જ રીતે કર્મ નિમિત થી આત્મા રાગાદિ રૂપે પરિણમે છે, તે રાગાદિ આત્મા નાં નિજ ભાવ નથી. આત્મા પોતાની સ્વચ્છતારૂપ ચૈતન્ય ગુણ માં વિરાજમાન છે. રાગાદિ તે સ્વરૂપ માં પેઠા વિનાં ઉપર ઉપર જ ઝલક માત્ર દેખાય છે.

૭. નિશ્ચય થી રાગાદિ ભાવો ની ઉત્પતિ ન થવી એટલા માત્ર થી અહિંસા થાય છે. રાગાદિ ભાવો નું ઉપજવું તેજ હિંસા એવું જૈનસિદ્ધાન્તનું રહસ્ય છે.

૮. તાડનાં વૃક્ષથી તૂટેલું ફળ નીચે પૃથ્વી ઉપર પડવા માંડયા પછી વચ્ચે કયા સુધી રહે ? બહુ જ અલ્પ કાલ અને તે પણ અનિયત ? તેથી હે ભવ્ય ! આ દેહાદિ ને આમ ક્ષળભગુર જાણી ને વાસ્તવિક અવિનાશી પદનું સાધન બીજા બધા કાર્યો જતાં કરીને પણ ત્વરાએ કરી લેવું, એ જ સુયોગ્ય છે, કારણ જીવન - સમય બહુ સાંકડો છે.

૯. જેમ કોઈ મનુષ્ય બહૂમૂલ્ય ચંદન ને અગ્નિ માટે બાળે છે તેમ અજ્ઞાની જીવ વિષયોં ની વાંછા મા નિર્વાણ નુ કારણ, જે મનુષ્ય ભવ તેનો નાશ કરે છે.

૧૦. જેમ સૂર્ય ઘોર અધકાર ને નિમિષ માત્ર મા નષ્ટ કરી નાખે છે, તેમ આત્માની ભાવના વડે, પાપો એક ક્ષણમાં નષ્ટ થઈ જાય છે.

૧૧. સહજ જ્ઞાનરૂપી સાપ્રાજય જેનુ અસ્તિત્વ છે, એવા શુદ્ધ ચૈતન્યમય મારા આત્માને જાણીને, હું આ નિર્વિકલ્પ થાઉં.

૧૨. આ જીવ જયાં સુધી ચેતન - અચેતન રૂપ પરપદાર્થોમાં પોતાપણાની બુદ્ધિ રાખે છે, પરપદાર્થોને પોતાના સમજે છે, ત્યાં સુધી, મોહ - મિથ્યાત્વ વધતો રહે છે.

૧૩. જેમ એક ડાબલી માં રત્ન તેનુ કાંઈ બગડયું નથી, એ ગુપ્ત છે, પણ દૂર કરી કાઢે તો વ્યકત છે, તેમ શરીર માં છૂપાયેલો આત્મા છે, તેનું કાઈ

બગડ્યું નથી, તે ગુપ્ત છે અને કર્મ રહિત થતાં પ્રગટે છે, ગુપ્ત પ્રગટ એ અવસ્થા ભેદ છે. એ બન્ને અવસ્થામાં સ્વરૂપતો જેવું ને તેવું છે, એવો શ્રદ્ધાભાવ એ સુખ નું મૂલ છે.

૧૪. હે આત્મન ! જેમ પરપદાર્થો ને પ્રતિદિન તું સ્મરે છે, તેમ જો શુદ્ધ આત્મ સ્વરૂપને સ્મરે તો મોક્ષ શું તને હસ્તગત ન થાય ?

૧૫. મોક્ષમાર્ગ તો એક વીતરાગભાવ છે, માટે જે શાસ્ત્રો મા કોઈ પ્રકારે રાગ-દ્વેષ-મોહભાવનો નિષેધ કરી વીતરાગભાવ નુ પ્રયોજન પ્રગટ કર્યુ હોય, તેજ શાસ્ત્રો વાંચવા ને સાંભળવા યોગ્ય છે.